अहिंसा, आगम और विज्ञान से आलोकित श्रेष्ठतम पत्रिका

भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

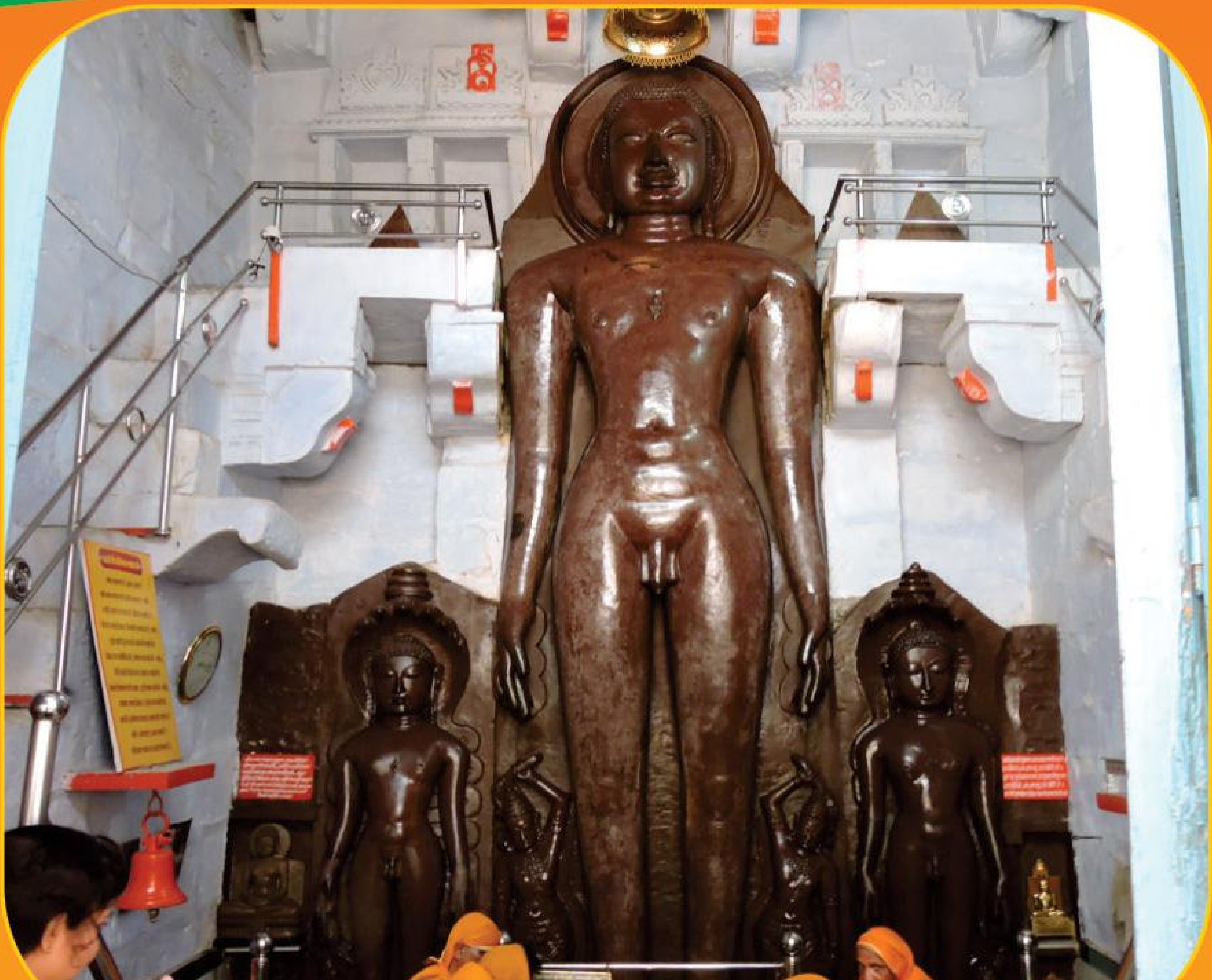

भ. श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, अतिशय क्षेत्र, भोजपुर (म.प्र.)

पर्व-विशेषांक

वीर निर्वाण संवत् - 2542

अश्विन कृष्ण पक्ष, वि.सं. 2073, सितम्बर 2016

वर्ष : नौ अंक : सैंतीस मूल्य : 10/-

आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ का सान्निध्य में बावड़ियाकलां, भोपाल में पंचकल्याणक विधान।

बावड़ियाकलां, भोपाल में ब्र. जयनिशांत के निर्देशन में वेदी प्रतिष्ठा का कार्यक्रम सम्पन्न।

मण्डीदीप में वर्षायोग स्थापना 2016 पर मंच पर विराजमान आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ।

आचार्यश्री के वर्षायोग की स्थापना हेतु निवेदन करते हुए मण्डीदीप के भक्तगण।

वर्षायोग 2016 की स्थापना के पूर्व भक्तों को शुभाषीश देते हुए आचार्यश्री।

पावनवर्षायोग स्थापना हेतु निवेदन करते हुए युवावर्ग मण्डीदीप।

वर्षायोग स्थापना के पूर्व मंगलाचरण करती हुईं जैन पाठशाला की कन्यायें।

वर्षायोग स्थापना पर सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करते हुए जैन पाठशाला के बालक।

मण्डीदीप में सोलहकारण विधान के सुअवसर पर आपस में क्षमावाणी मनाते हुए भक्तगण।

श्रीजी के विमानोत्सव के जुलूस में आचार्यश्री की आरती उतारते हुए भक्तगण।

पार्श्वनाथ मन्दिर, मण्डीदीप के लिए आचार्यसंघ का चित्र प्रदान करते हुए अशोक मेडीकल।

क्षमावाणी पर्व पर विमानोत्सव पर जिनेन्द्रभगवान का कलशाभिषेक करते हुए भक्तगण।

श्रीजी की शोभायात्रा में विमान लेकर चलते हुए जैन भक्तगण, मण्डीदीप।

विमानोत्सव पर आचार्यश्री आर्जवसागर जी की प्रदिक्षणा देती हुईं जैन परिवार की बहिनें।

कार्यक्रम के पूर्व आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज का चित्रानावरण करते हुए नवीन जैन आदि।

आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज को आहार देते हुए इंजीनियर महेन्द्र जैन, भोपाल ।

वर्षायोग स्थापना पर आचार्यश्री का पादप्रक्षालन करते हुए भक्तगण।

वर्षायोग स्थापना पर दीप प्रज्ज्वलन करते हुए भोपाल नगर के भक्तगण।

वर्षायोग स्थापना पर भाव विज्ञान पत्रिका के नवीन अंक का विमोचन।

वर्षायोग स्थापना पर मंचासीन आचार्यश्री आर्जवसागरजी ससंघ।

वर्षायोग के प्रथम कलश स्थापक विजय पहाड़िया के परिवार जन श्रीफल अर्पित करते हुए।

वर्षायोग स्थापना पर आचार्यश्री की पूजन करते हुए मण्डीदीप के भक्तगण।

वर्षायोग की स्थापना दिवस पर आचार्यश्री की आरती करते हुए भक्तगण।

मण्डीदीप में 2016 की वर्षायोग स्थापना पर आर्यिकाश्री प्रतिभामति व राजितमति माताजी।

17

मण्डीदीप में 2016 के वर्षायोग पर पाण्डाल में उपस्थित जनसमूह।

आचार्यश्री आर्जवसागर की वेबसाइट की जानकारी देते हुए विपुल मेहता, अहमदाबाद।

19

वर्षायोग के कलश पाण्डाल से लेकर जैन भवन की ओर ले जाते हुए पुण्यार्जक भक्तगण।

मोक्षसप्तमी पर्व पर सम्मेदशिखर मण्डल विधान व निर्वाण लाडू का भव्य कार्यक्रम।

20

सोलहकारण कलश स्थापित करते हुए विनोद जैन वकील साहब।

चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शान्तिसागरजी की पुण्यतिथि मनाते हुए भक्तगण।

षोडसकारण पर्व पर पधारे भक्तगण आचार्यश्री का पादप्रक्षालन करते हुए।

दसलक्षण कलश स्थापित करने वाले सभाजनों के कलश में हाथ लगवाते हुए।

पर्यूषण पर्व पर श्रीजी का जिनाभिषेक करते हुए सौधर्म व ऐशान इन्द्र।

मण्डीदीप में 2016 के दसलक्षण पर्व पर तत्त्वार्थसूत्र का अध्ययन करते हुए भक्तगण।

आचार्यश्री द्वारा रचित साहित्य का विमोचन करते हुए मण्डीदीप के भक्तगण एवं डॉ. अजित जैन।

सोलहकारण पर्व में संगीतमय सामूहिक पूजन करवाते हुए प्रदीप जैन, बीना।

वासुपूज्य भगवान के निर्वाणकल्याणक पर मण्डीदीप में लाडू अर्पित करते हुए भक्तगण।

मण्डीदीप में दसलक्षण पर्व के रात्रिकालीन धार्मिक कार्यक्रम की प्रस्तुति देते हुए जैन पाठशाला के विद्यार्थी।

दसलक्षण पर्व के उपरान्त मण्डीदीप में सम्मानित होते हुए अरविन्द जैन, दमोह।

दसलक्षण पर्व समापन पर सम्मानित होते हुए श्री सी. कुमार जी, तमिलनाडु।

मण्डीदीप में सोलहकारण व्रत के समापन पर
सम्मानित होती हुईं दमोह की श्राविकाएँ।

पर्व के समापन पर मण्डीदीप में सम्मानित होते हुए
अरविन्द गांधी, सूरत।

सोलहकारण व्रत सम्पन्न करने वाले ओम् जैन,
ग्वालियर सम्मानित होते हुए।

महापर्व पर मण्डल विधान में मण्डल पर कलश
स्थापित करते हुए भक्तगण।

मण्डीदीप में षोडसकारण पर्व सम्पन्न होने पर
सम्मानित होते हुए भरत जैन, दमोह।

सोलहकारण व्रत सम्पन्न करने पर सम्मानित होती हुईं
ग्वालियर की श्राविकाएँ।

मण्डीदीप में दसलक्षण के दस उपवास करने वाली
श्राविकाओं का सम्मान।

सोलहकारण विधान में अर्घ समर्पित करते हुए
श्रावक-श्राविकाएँ।

रजिस्ट्रेशन क्रं. **MPHIN/2007/27127**

त्रैमासिक

भाव विज्ञान

(BHAV VIGYAN)

वर्ष-नौ

अंक - सैंतीस

आशीर्वाद व प्रेरणा

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ।

● परामर्शदाता ●

पंडित मूलचंद लुहाड़िया

किशनगढ़ (राजस्थान) मोबा.: 9352088800

● सम्पादक ●

श्रीपाल जैन 'दिवा'

शाकाहार सदन, एल.आई.जी.-75, केशर कुंज, हर्षवर्धन नगर, भोपाल-462003 (म.प्र.)

फोन : 4221458

● प्रबंध सम्पादक ●

डॉ. सुधीर जैन, प्राध्यापक

85, डी.के. काटेज, ई-8 एक्सटेंशन, अरेरा कालोनी, भोपाल मो. 9425011357

● सम्पादक मंडल ●

पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)

डॉ. अजित कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)

डॉ. संजय जैन, पथरिया, दमोह (म.प्र.)

डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर (म.प्र.)

इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)

श्री सुनील वेजीटेरियन, दमोह (म.प्र.)

● कविता संकलन ●

पं. लालचंद जैन 'राकेश', भोपाल

● प्रकाशक ●

श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन

MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा, भोपाल

फोन : 0755-4902433, 9425601161

email : bhav.vigyan@yahoo.co.in

● आजीवन सदस्यता शुल्क ●

पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक	:	24,500
परम संरक्षक	:	21,000
पुण्यार्जक संरक्षक	:	18,000
सम्मानीय संरक्षक	:	11,000
संरक्षक	:	5,100
विशेष सदस्य	:	3100
आजीवन (स्थायी)सदस्यता	:	1500

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ प्रबंध सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक		पृष्ठ
1. प्रवचन प्रमेय	- आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज	02
2. मध्यप्रदेश विधानसभा में धर्मसभा	- पंकज प्रधान	08
3. विश्वविख्यात गणितज्ञ श्रीमान् (प्रोफेसर) एल.सी. जैन, जबलपुर	- पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश'	09
4. सत्पथ-दर्पण	- स्व.पं. अजित कुमार शास्त्री	10
5. पारसचन्द से बने आर्जवसागर	- आर्यिकारत्नश्री प्रतिभामति माताजी	18
6. भरत ऐरावत विदेह क्षेत्रस्थ कर्मभूमियाँ : एक अनुशीलन	- डॉ. श्रेयांस कुमार जैन	22
7. पर्वाधिराज पर्यूषण महापर्व	- पंकज जैन	30
8. कैसे पालते हैं जैन धर्म हनुमान सिंह गुर्जर S.D.M.	- पंकज जैन	33
9. हमें आपकी जरूरत है	- महिमा जैन	36
10. अहिंसा बिलछानी (जिवाणी) यंत्र		37
11. समाचार		38
12. प्रश्नोत्तरी		

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः

प्रवचन प्रमेय

गतांक से आगे........ **-आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज**

''बिन जाने तै दोष गुणन को कैसे तजिये गहिये''

वस्तुओं को छोड़िये और यह भी जानिये कि क्या छोड़ना है? यह ज्ञान जिसको नहीं होता वह तीन काल में भी वस्तुतत्त्व को प्राप्त नहीं कर सकता। हमें गुणों को तो प्राप्त करना है और दोषों को निकालना है। ध्यान रखिये, मात्र बातों के जमा खर्च से कुछ भी होने वाला नहीं, चाहे जीवन भी क्यों न चला जाये, कुछ करना होगा। सर्वप्रथम जो ग्राह्य है उसे जानना-पहचानना आवश्यक है और इसके साथ उसके ''अगेन्स्ट'' को भी जानना आवश्यक है। उपाय के साथ-साथ अपाय भी जानिए। उस उपाय को प्राप्त करने में किससे बाधा आ रही है दु:ख क्यों हो रहा है? **दु:ख को समझना ही सुख को प्राप्त करने का सही रास्ता है।** आचार्य पूज्यपाद स्वामी ने एक जगह कहा- हे भगवन्! हम आपके पास इसलिए नहीं आये कि आप बुला रहे हैं। इसलिए भी नहीं, कि आपकी पहचान पहले से है या आप सुख को जानते-देखते हैं। बल्कि हमें तो ऐसी पीड़ा हुई कि उससे हम भागने लगे और भागते-भागते हर जगह गये लेकिन शान्ति नहीं हुई, परन्तु आपके चरणों में आते ही दिल को बहुत शान्ति हो गई, इसलिए आए हैं।

दु:ख को हम छोड़कर आये, पुरुषार्थ हमारा है और भगवान के सान्निध्य में आये। इधर रास्ते तो बहुत हैं- पथ बहुत हैं, जहाँ-जहाँ भटकने से च्युत होता गया, उनको छोड़ता गया और यहाँ तक आ गया। यही सच्चा पुरुषार्थ है- स्व की ओर मुड़ना ही पुरुषार्थ है।

इस प्रकार द्रव्यानुयोग के द्वारा- कर्मसिद्धान्त, जीवसिद्धान्त के द्वारा जीव, अजीव, बन्ध और आस्रवादि तत्त्वों को जानिए। इनके 148 प्रकार के कर्मों के बारे में जानिए। किस द्रव्य का कैसा-कैसा परिणमन होता है, इसको समझने का प्रयत्न करिये। कारण कि **जैनागम में तीन चेतनाएं- कर्मफलचेतना, कर्मचेतना और ज्ञानचेतना ही कहीं गई हैं। कोई चौथी- कालचेतना नहीं। आदि की दो चेतनाओं के द्वारा ही जीव संसार से बंधा हुआ है।** एक कर्म करने वाली चेतना, एक कर्म को भोगने वाली चेतना और एक केवल ज्ञान का संवेदन करने वाली चेतना। इन चेतनाओं को भी द्रव्यानुयोग से ही समझा जा सकता है।

इस प्रकार चारों अनुयोगों के विभाजन को, जो निराधार नहीं, आधार के अनुसार कहा गया। एक बार पुन: द्रव्यानुयोग में आने वाले ग्रन्थों को गिन लें- जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, धवला, जयधवला, महाबन्ध आदि ये सभी सिद्धान्त में एवं समयसार, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, द्रव्यसंग्रह आदि अध्यात्म में। इसके साथ-साथ भावनाग्रन्थ भी गिनना चाहिए। ज्ञानार्णवकार आचार्य शुभचन्द्र ने कहा- भावना ही एकमात्र अध्यात्म का प्रवाह है। अत: अध्यात्म तक पहुँचने के लिए अनुप्रेक्षा आवश्यक है। भावना आर्टीफीशियल नहीं होना चाहिए। भावना, भावना के अनुरूप होती है तब-

सव्वे खलु कम्मफलं थावरकाय तसा हि कज्जजुदं।
पाणित्तमदिक्कंता णाणं विंदंति ते जीवा॥

जिसमें कर्मफलचेतना तो समस्त एकेन्द्रिय जीवों को हुआ करती है, कर्म के फल को बिना प्रतिकार किये सहन करते रहते हैं। दूसरी कर्मचेतना कर्म करने रूप प्रवृत्ति है। जिसमें त्रसादिक जीव इष्टानिष्ट के संयोग-वियोग से प्रतिकारादिक की क्रिया, भाव करते रहते हैं। और तीसरी ज्ञानचेतना है जिसके संवेदन के लिए आचार्य कुन्दकुन्द देव कहते हैं कि उस ज्ञानचेतना की बात क्या बताऊँ, जिसका संवेदन (अनुभव) मात्र सिद्धों को ही हुआ करता है। आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने पंचास्तिकाय में ''पाणित्तमदिक्कंता'' शब्द लिखा है। जिसकी टीका करते हुए आचार्य जयसेनस्वामी लिखते हैं कि जो प्राणों से अतिक्रान्त/रहित हो चुके हैं यानि दस प्रकार के प्राणों से रहित, तो मात्र सिद्ध परमेष्ठी हुआ करते हैं, उन्हीं सिद्ध परमेष्ठियों के लिए इस ज्ञानचेतना का संवेदन हुआ करता है। धन्य है वह ज्ञानचेतना जिसकी अनुभूति संसार में रहते हुए केवली अर्हन्त परमेष्ठी को भी नहीं हुआ करती है।

''भावना भवनाशिनी''

भावना ही भव का, संसार का उच्छेद करा देती है। आप लोगों का यह जिज्ञासु-भाव सराहनीय है। आपकी भावना ऐसी ही होती रहे, ऐसी भगवान से प्रार्थना करता हूँ। आप प्रभावना की ओर न देखकर भावना की ओर देखें और समझें कि हमारी भावना किस ओर बढ़ रही है। यदि विषयों की ओर नहीं है तो मैं समझूंगा कि आज का यह प्रवचन सार्थक है, नहीं तो काल अपनी गति से चल ही रहा है और हम अपनी चाल से। इससे कुछ होने वाला नहीं। हमारे द्रव्य का परिणमन, गुण को परिणमन और आत्मपरिणति, तीनों अशुद्ध है, इस अशुद्धता का अनुभव करना हमें इष्ट नहीं। अत: शुद्धि के अनुभव की ओर बढ़ें!

महावीर भगवान की जय (केसली 7-3-86 अवतरणदिवस प्रात: बेला)

नीर-निधि से धीर हो, वीर बने गंभीर
पूर्ण तैरकर पा लिया, भवसागर का तीर॥
अधीर हूँ मुझे धीर दो, सहन करूँ सब पीर।
चीर-चीर कर चिर लखूं, अन्तर की तस्वीर॥

(स्वयंभूस्तोत्र पद्यानुवाद 24/9-10)

वस्तु है, और उसके ऊपर आवरण है। वस्तु है और उसके ऊपर दूसरे पदार्थों का दबाव है। जब वस्तुएं स्वतन्त्र हैं- अपना-अपना परिणमन करती हैं फिर इन बाहरी वातावरणों से प्रभावित होने का बंधन, आखिर क्यों?- इस प्रकार जिज्ञासा लेकर प्रात:काल कोई भव्य आया था, आचार्यश्री के चरणों में। वह भावुक है, साथ में विवेकवान् भी। उसका लक्षण बहुत अच्छा है कि ''अपना हित चाहता है''। बिलकुल ठीक, उपदेश जो होता है वह न देवों को होता है ना ही तिर्यंचों को। ना भोगभूमि के जीवों के लिए होता है और ना नारकियों के लिए। उपदेश मात्र मनुष्यों के लिए है, वह भी जो समवसरण की शरण में गये हैं। वहाँ पर जितना क्षेत्र लांघना

आवश्यक था, लांघकर गये हैं। उन्हीं को देशना मिलती है।

देशना देना भगवान का लक्षण नहीं है। उनका कर्त्तव्य नहीं है। उनके लिए अब कोई भी कर्त्तव्य शेष नहीं। कोई लौकिकता भी नहीं रही। वे बाध्य होकर के भी नहीं कहते हैं। मात्र जो पुण्य लेकर के गया है- सुनने का भाव लेकर गया है प्रभु के चरणों में, वह उसे पा लेता है। जहाँ तक मुझे स्मरण है श्वेताम्बर साहित्य में देशना के बारे में कहा है कि- ''प्रभु की देशना सर्वप्रथम देवों के लिए हुई'' परन्तु इसमें कोई तुक- तथ्य नहीं बैठता। जो भोगी होते हैं उनके लिए योग का व्याख्यान- उपदेश हो, यह संभव-सा नहीं लगता, क्योंकि रुचि के बिना **''इन्ट्रेस्ट'' के बिना ''इन्टर'' संभव नहीं है। उसके बिना भीतरी बात, जो यहाँ चल रही है उतरेगी नहीं। प्रभु की देशना में बाहरी बात भले ही चलती रहे लेकिन वे सभी भीतर के लिए चलती है और वे भीतर ही भीतर गूंजती भी रहती हैं।**

उस भव्य ने हित तो चाहा है और वह हित किसमें है? ऐसा पूछा है। हित मोक्ष में है ''स आह मोक्षः इति'' ऐसा आचार्य परमेष्ठी ने कहा, फिर उसे प्राप्त करने से साधनों के बारे में कहा- बात ऐसी है कि साध्य के बारे में दुनिया में कभी विसंवाद नहीं होते, होते हैं तो मात्र साधन को लेकर और उसको लेकर हुए बिना रहते भी नहीं है। मंजिल में विसंवाद नहीं होता, मंजिल से पथ की ओर नहीं चलते, बल्कि मंजिल को सामने कर जब चलना चाहते हैं तो पथ का निर्माण होता है। सबसे पहले पथ-विचारों से बनते हैं और विचारों के पथ का निवारण कैसे हो? बाह्य पथों में तो मंजिल ही पहुँच से, आसानी से निवारण संभव है लेकिन विचारों में कैसे? प्रभु कहते हैं कि- उस समय हमारा ज्ञान पंगु ही रहेगा। अनन्तशक्तियों का पिण्ड जो आत्मा है उसमें अन्तरायकर्म के क्षय से होने वाला जो बल, वह भी घुटने टेक देगा। इसमें कोई सन्देह नहीं। उसका बल इतना होकर भी- कितना होकर? तीन लोक की सर्वाधिक शक्ति होकर भी, एक व्यक्ति को भी झुका नहीं सकती। विचारों की पॉवर (शक्ति) बहुत हुआ करती है। विचारों की शक्ति एक कील के समान है।

एक भैंसा था। बहुत शक्तिशाली होता है भैंसा। एक छोटी-सी कील के सहारे उसे बांध दिया जाता है। वह पूरी शक्ति लगाता है, फिर भी वह कील उखड़ती नहीं। क्यों नहीं उखड़ती? ऐसी क्या बात है। बात ऐसी है, उसके निकालने के लिए पहले हिलाना आवश्यक होता है। बिना हिलाये वह पूरी शक्ति भी लगा दे, तो भी उखड़ नहीं सकती। कुछ ठीक-ठीक मेहनत करने पर उस कील को तो उखाड़ सकता है। परन्तु तीन लोक के नाथ, जो अनन्तशक्ति से सम्पन्न हैं, वे भी एक वस्तु का दूसरी वस्तु के ऊपर पड़ते प्रभाव को, भीतरी वस्तु के परिणमन में बाल-मात्र भी अन्तर नहीं करा सकते। वे निरावरण अपने लिए हुए हैं, दूसरों- (हम लोगों) के लिए नहीं।

मोक्ष एक मंजिल है। वहाँ तक पहुँचने के लिए मार्ग की नितान्त आवश्यकता है। क्या है वह मार्ग? तीन बातें हैं- दर्शन, ज्ञान और चारित्र जो कि ''सम्यक्'' उपाधि से युक्त है-

''सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः''

सम्यग्दर्शन का अर्थ क्या है? **''तत्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्''** कहा है। आप सोचते होंगे कि हम काँच

ले लें, चश्मा लगा लें, उपनयन खरीद लें ताकि तत्त्वों को देख सकें और उनके ऊपर श्रद्धान कर सकें। लेकिन नहीं, तत्व क्या है? इसकी चर्चा तो बहुत हो सकती है परन्तु ''समझ में आ जाए, समझ में बैठ जाए'', यह समझ से परे है। यहाँ पर तत्त्व और अर्थ के ऊपर श्रद्धान करने की बात कही गयी है न कि देखने की ध्यान रखिए, तत्त्व कभी दिख नहीं सकता। जो दिखता है वह तत्त्व नहीं है जो दिखाने की कोशिश कर रहे हैं, वे भी दिखा नहीं सकते।

कोविदिदच्छो साहू संपडिकाले भणिज्ज रूवमिणं।
पच्चक्खमेव दिट्ठं परोक्खणाणे पवट्ठंतं॥

ऐसा कौन-सा विद्वान है, कौन-सा साधु-सज्जन है, जो यह कहे कि आज भी मैं वस्तुतत्त्व को यूँ हाथ पर, हथेली के ऊपर रखकर देख रहा हूँ अपनी आँखों से? अर्थात् कोई नहीं। यदि कोई कहता भी है तो वह कहने वाला विद्वान नहीं हो सकता। चाहे गणधरपरमेष्ठी प्रवचन दें या स्वयं वीरप्रभु। या कोई और भी क्यों न हो, उनके प्रवचन में जो तत्त्व आयेगा वह परोक्ष ही होगा। कोशिश करके अनन्तशक्ति लगा करके भी किसी प्रकार से, किसी की आँखों से वस्तुतत्त्व को दिखा दें ताकि उसका भला हो जाए- यह संभव नहीं। देखने का नाम सम्यग्दर्शन कतई ही नहीं। किसी भी अनुयोग में देख लीजिए, देखने का नाम सम्यग्दर्शन नहीं। लेकिन ''पश्यति-जानाति'' इस प्रकार कहा तो है? हाँ कहा है, टीकाकार ने इसे खोला भी है कि देखने का नाम सम्यग्दर्शन न लेकर यहाँ पर ''देखने का अर्थ श्रद्धान लेना चाहिए। प्रात:काल एक बात चली थी कि सम्यग्दर्शन का अर्थ अपनी आत्मा में लीन होना है तथा अभी कहाँ- तत्त्वों के ऊपर श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है। बात उलझन जैसी लगती है कि ''समयसार'' में भूतार्थ का नाम सम्यग्दर्शन है और तत्त्वार्थसूत्र में- तत्त्वार्थश्रद्धान का नाम सम्यग्दर्शन। जो तत्त्वों के ऊपर श्रद्धान करता है वह चूंकि अभूतार्थ माना जाता है। लेकिन इन दोनों में कोई विपरीतता नहीं है मात्र सोचने-समझने की बात जरूर है।

श्रद्धान जो होता वह परोक्ष पदार्थ का होता है। सामने आने के उपरान्त हमें उन चीजों पर श्रद्धान करने की कोई आवश्यकता नहीं होती। उसमें लीन होने के बाद नाम तो संवेदन है, जो कि अध्यात्मग्रन्थों में बार-बार सम्यग्दर्शन के लिए कहा जाता है। आगम ग्रन्थों में भी सम्यग्दर्शन की बात कही है पर उससे विभाजन कर दिया गया है। वह विभाजन यह है कि सम्यग्दर्शन श्रद्धान का ही नाम है लेकिन केवल श्रद्धान के द्वारा तीन काल में भी मुक्ति नहीं होगी। ज्ञान का नाम सम्यग्ज्ञान है लेकिन उससे भी मुक्ति नहीं होगी, इसी प्रकार चारित्र के द्वारा भी मुक्ति नहीं होगी। फिर मुक्ति किससे होगी ? मुक्ति होगी जब भूतार्थता का अनुभव करेंगे तब। अर्थ यह हुआ कि ''सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र ये तीनों एक उपयोग की धाराएं हैं। जिस उपयोग की धारा के द्वारा तत्त्वों पर श्रद्धान किया जाता है उसे सम्यग्दर्शन कहते हैं। जब वही उपयोग की धारा चिन्तन में लग जाती है तब सम्यग्ज्ञान कहलाती है। जब कषायों का विमोचन राग-द्वेष का परिहार करने लग जाती है तो उपयोग की धारा को सम्यक्चारित्र संज्ञा मिल जाती है-

''तत्र सम्यग्दर्शनं तु जीवादिश्रद्धानस्वभावेन ज्ञानस्य भवनम्। जीवादिज्ञानस्वभावेन ज्ञानस्य भवनं ज्ञानम्। रागादिपरिहरणस्वभावेन ज्ञानस्य भवनं चारित्रम्। तदैव सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राण्येकमेव

ज्ञानस्य भवनमायातम्। ततो ज्ञानमेव परमार्थमोक्षहेतुः।''

अमृतचन्द्राचार्य की आत्मख्याति की ये पंक्तियाँ हैं। बहुत कठिन लिखते हैं वे, लेकिन भाव तो समझ में आ ही जाता है- ज्ञान का श्रद्धान के रूप में परिणत होना सम्यग्दर्शन, ज्ञान का चिन्तन के रूप में परिणत होना सम्यग्ज्ञान और ज्ञान का रागद्वेष परिहार करने में उद्यत होना सम्यक्चारित्र है। इन तीनों की एकता से ही मुक्ति संभव है, अन्यथा कभी नहीं।

सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र- ये तीन नहीं है किन्तु उपयोग की धारा में जब तक भेद प्रणाली चलती है तब तक के लिए भिन्न-भिन्न माने जाते हैं। आचार्यों ने अध्यात्मग्रन्थों में इसे खोला है। इसी का नाम सरागसम्यग्दर्शन, भेदसम्यग्दर्शन, व्यवहारसम्यग्दर्शन और शुभोपयोगात्मक परिणति आदि- आदि कहा है। इसी का नाम श्रद्धान भी है। जब तक आत्मा अपने गुणों को प्रत्यक्ष नहीं देख लेता, तब तक उसे समझाना पड़ता है, उपदेश दिया गया है, कि तुम सर्वप्रथम इसको समझो, फिर इसको। समझो का अर्थ-श्रद्धान करो, उतारो। एक बार श्रद्धान मजबूत हो गया तब ही श्रद्धेय, पदार्थ की ओर यात्रा/गति होगी अन्यथा तीन काल में भी संभव नहीं? इसे आचार्यों ने वीतराग सम्यग्दर्शन का साधक सम्यग्दर्शन माना है। उन्होंने कहा है-

''हेतु नियत को होई।''

जैसे प्रातःकाल भी छहढाला की पंक्ति कही गयी थी, कि निश्चय सम्यग्दर्शन के लिए हेतुभूत यह व्यवहार सम्यग्दर्शन होता है। व्यवहार सम्यग्दर्शन फालतू नहीं है, किन्तु पालतू है। अभूत नहीं है, वह बाह्य भी नहीं है। अभूतार्थ की व्याख्या ''जयसेनाचार्य जी'' ने इतनी बढ़िया लिखी है, अमृतचन्द्राचार्य जी ने भी अपनी आत्मख्याति में अभूतार्थ क्या वस्तु है इसे लिखा है। उन्होंने कहा है- भेदपरक जो कुछ भी है वह अभूतार्थ है और अभेदपरक ''भूतार्थ''। इसको निश्चयसम्यग्दर्शन भी कहते हैं, इसी के साथ रत्नत्रय की एकता मानी गई है। लीनता मानी गई है। स्थिरता मानी गई है। जिसके द्वारा हमें साक्षात् केवलज्ञान की उपलब्धि अन्तर्मुहूर्त के अन्दर हो जाती है। यह विभाजन हमें आगम अर्थात् धवला, जयधवला, महाबन्ध, गोम्मटसार आदि ग्रन्थों में नहीं मिल सकेगा। यह मात्र अध्यात्म ग्रन्थों में ही मिलता है। इसके द्वारा यात्रा पूर्णता को प्राप्त होती है, अन्यथा जो व्यक्ति अपनी यात्रा इस जीवन में नहीं कर पाता तो उसे मुकाम करने की आवश्यकता पड़ेगी। उसका मुकाम बीच में ही होगा, मंजिल पर नहीं। जो सीधे मंजिल जाना चाहते हैं, उनकी प्रमुखता के साथ यह बात- अभेदरत्नत्रय की, की गई है।

सरागसम्यग्दर्शन परोक्ष-पदार्थ का हुआ करता है और श्रद्धान तब तक ही होता है जब तक पदार्थ परोक्ष है। वीतराग सम्यग्दर्शन का विषय ''आत्मतत्त्व, शुद्धपदार्थ शुद्ध अस्तिकाय और शुद्ध समयसार है''- ऐसा आचार्यों ने कहा है। इसको और भी बारीकि से खोलने का प्रयास किया है, उन्होंने कहा है कि- जिस प्रकार केवली भगवान् अपनी दृष्टि के द्वारा शुद्धतत्त्व का अवलोकन करते हैं, वैसा अवलोकन छद्मस्थावस्था में न भूतो न भविष्यति। क्योंकि बात यह है कि चाहे शुद्धोपयोग हो या शुभोपयोग या अशुभोपयोग, कोई भी उपयोग हो, जब तक कर्मों के द्वारा उपयोग प्रभावित होता है तब तक उसमें वस्तुत्त्व का यथार्थावलोकन नहीं हो सकता।

अत: बारहवें गुणस्थान तक निश्चयसम्यग्दर्शन की संज्ञा दी जाती है। इसके बाद शुद्धोपयोग की परिणति, केवलज्ञान के उपरान्त नहीं रहती। इसका मतलब यह हो गया कि- शुद्धोपयोग भी आत्मा का स्वभाव नहीं है। शुभोपयोग और अशुभोपयोग तो है ही नहीं। इसमें उन्होंने हेतु दिया-ध्यान का नाम शुद्धोपयोग है और ध्यान आत्मा का स्वभाव नहीं, अत: शुद्धोपयोग भी आत्मा का स्वभाव नहीं।

''इन्द्रियज्ञानं यद्यपि व्यवहारेण प्रत्यक्षं भण्यते तथापि निश्चयेन केवलज्ञानपेक्षया परोक्षमेव''

जब इन्द्रियज्ञान की अपेक्षा, मन की अपेक्षा, श्रुत की अपेक्षा और कोई बाहरी साधनों की अपेक्षा से तत्त्वों का निरीक्षण करते हैं, तब शुद्धोपयोग भी ''प्रत्यक्ष'' संज्ञा को प्राप्त हो जाता है। लेकिन शुद्धोपयोग और केवलज्ञान में उतना ही अन्तर है, जितना सर्वज्ञता और छद्मस्थावस्था में। अध्यात्मग्रन्थों में इस सबका खुलासा किया गया है। जो व्यक्ति इस परम्परा का सही ढंग से अध्ययन करता है उसके लिए कहीं पर भी विसंवाद का कोई सवाल ही नहीं।

सर्वप्रथम हमें जो सम्यग्दर्शन उत्पन्न होगा वह व्यवहार सम्यग्दर्शन-सराग-सम्यग्दर्शन ही होगा। इसकी उत्पत्ति में दर्शनमोहनीय का और चारित्रमोहनीय की अनन्तानुबन्धी का उपशम-क्षय-क्षयोपशम होना अनिवार्य है। इसी का नाम व्यवहार सम्यग्दर्शन है। इसके बल पर ही आगे कदम उठेंगे। यदि व्यवहार सम्यग्दर्शन नहीं है तो मोक्षमार्ग में आगे कदम उठा सकने का कोई सवाल ही नहीं रह जाता है। महाराज! एक प्रश्न बार-बार आता है कि व्यवहार पहले होता है या निश्चय? कैसे क्या होता है, कुछ यह भी बता दीजिये? भैय्या निश्चय, व्यवहार के बिना नहीं होता और व्यवहार जो होता वह निश्चय के लिए होता है। अब निर्णय करना है कि कौन पहले होता है, कौन बाद में। मैं तो आपसे यही कहूंगा कि यदि आपको समझना है तो दो की जगह तीन रखिये, अब क्रम स्पष्ट हो जायेगा। लौकिक दृष्टि में हमने निश्चय और निर्णय का भेद समाप्त कर रखा है, इसलिए यह विवाद है। लेकिन बन्धुओं? निर्णय अलग है और निश्चय अलग। सर्वप्रथम निर्णय होता है, क्योंकि निर्णय के बिना- अवाय के बिना कदम ही आगे नहीं उठा सकते। और निश्चय संज्ञा जिसको दी गई है उसका अर्थ- ''पर्याप्त मात्रा में सब कुछ प्राप्त कर लेना है''। निश्चय का नाम साध्य है। व्यवहार साधन होता है। **इस प्रकार जिस साध्य को सिद्ध करना- प्राप्त करना है उसका लक्ष्य बनाना निर्णय है और जिसके माध्यम से, साधन से साध्य सिद्ध होता है वह व्यवहार है तथा साध्य की उपलब्धि होना निश्चय है,** इस तरह पहले निर्णय के बिना जो मार्ग में आगे चलते हैं वह गुमराह हो जाते हैं और व्यवहार के बिना जो व्यक्ति निश्चय को हाथ लगाना चाहते हैं उनकी क्या स्थिति होती है? तो आचार्य कहते हैं-

ज्ञान बिना रट निश्चय-निश्चय निश्चयवादी भी डूबे।
क्रियाकलापी भी ये डूबे, डूबे संयम से ऊबे॥
प्रमत्त बनकर कर्म न करते अकम्प निश्चल शैल रहे।
आत्मध्यान में लीन किन्तु मुनि, तीन लोक पर तैर रहे॥

क्रमश: .....

मध्यप्रदेश विधानसभा में धर्मसभा

जिस विधानसभा में रोज तीखी बहस और नोकझोंक होती थी एक दूसरे पर प्रश्न प्रतिप्रश्न किए जाते थे भारी शोर शराबा होता था। आज वह शांति के साथ मुख्यमंत्री, विधायकगण, अधिकारीगण सभी देश के चलते फिरते भगवान को सुनने बैठे थे। दीप प्रज्ज्वलन श्री शिवराज जी, श्री सीताशरण जी ने किया और श्रीफल भेंट कर आशीर्वाद लिया। वित्त मंत्री जयंत मलैया, बाला बच्चन, राजेन्द्रसिंह जी ने आशीर्वाद लिया। मंगलाचरण डॉ. सुधा मलैया जी ने किया। विधानसभा अध्यक्ष जी ने कहा कि श्रद्धावान और ज्ञान के पुंज विधान भवन में पधारे हैं उनका आत्मीय अभिनन्दन है। इस अवसर पर मुख्यमंत्री श्री शिवराज जी ने कहा कि आज सबका सौभाग्य है कि एक विधानसभा हमारे मंत्री मंडल की है और एक कैबिनेट आचार्यश्री के मुनिराजों की है जो भव्य है। आप के दर्शन को आज पक्ष विपक्ष एक साथ बैठा है ये सबसे प्रसन्नता की बात है। उन्होंने कहा कि अपने आप हम बदल सकते हैं यदि आप जैसे सर्वस्व त्यागी के बताये रास्ते का अनुसरण करें। आत्मा को दीपक तभी बनाया जा सकता है जब आप जैसे तपस्वी की वाणी को आत्मसात करें।

इस अवसर पर **परम पूज्य आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज** ने कहा कि पथिक पथ पर चलता है पैरों से यदि पैर में कांटा लग जाय तो दूसरे पैर से काम चला लेता है एक आँख क्षति ग्रस्त हो भी जाय तो दूसरी आँख से काम चला लेता है। सदन पक्ष विपक्ष दोनों के संयुक्त प्रयासों से चलता है। राष्ट्रीय पक्ष को सामने रखकर ही काम मिलजुल कर किया जाये जनता का दुःख तभी दूर हो सकता है। उन्होंने राष्ट्रीय पक्ष को सामने रखकर काम करने की प्रेरणा देते हुए कहा कि जहाँ हम हैं ये मध्यभारत है जो चारों दिशाओं का केन्द्र बिन्दु है यहीं से देश की चारों दिशाएं प्रभावित होती हैं। संस्कारों से बंधकर कार्य करेंगे तो अपनी संस्कृति को अपने भारत को मजबूत भारत बना पाएंगे। अहिंसा की संस्कृति से ही इस भारत राष्ट्र को जाना जाता है। भेद विज्ञान को ताक में रखकर भौतिकता के विज्ञान में घुसकर अपनी संस्कृति को लहूलुहान बना लेते हैं। पूरी दुनिया भारतीय संस्कृति पर चलने का प्रयास कर रही है। ये विधान भवन अहिंसा का केन्द्र बिंदु है ये एक पवित्र सदन है जहाँ पक्ष विपक्ष को छोड़कर राष्ट्रीय पक्ष के बारे में विचार करना है। राजा यदि परमार्थ की खोज में निकलेगा तो प्रजा का कल्याण अवश्य होगा।

गुरुवर ने कहा कि जिस तरह किसान बीज को अपने पुरुषार्थ से अंकुरित बना देता, उसकी नीचे की यात्रा प्रारम्भ होती है जड़ महबूत होती है। फिर वो एक विशाल वृक्ष का रूप लेता है। भारत की अहिंसा की संस्कृति के लिए जो शहीद हुए हैं उसके शहीद स्मारक के बारे में गुरुजी ने कहा कि ये स्मारक देश के प्रत्येक वर्ग को अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए प्रेरित करता है। उन्होंने कहा कि देश में जो दूध का उत्पादन हो रहा है उसमें और वृद्धि होनी चाहिए। महावीर ने कहा कि संग्रह तो होना चाहिए परिग्रह नहीं होना चाहिए। आज जनप्रतिनिधियों को इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि आप जनता के लिए काम करें पद का अभिमान न करें, आप सेवा के लिए चुने गए हैं।

आचार्यश्री ने कहा कि यदि विकास चाहिए, समृद्धि चाहिए तो इंडिया को विस्मृत कर भारत को पूरी

ताकत से खड़ा करना होगा। मूल संस्कृति भारत का वैभव तभी अमर रह सकता है जब जन-जन में भारतीयता, राष्ट्रवाद की भावना को प्रबल करना होगा। उन्होंने कहा कि मध्यप्रदेश सरकार ने हिंदी की मजबूती के लिए जो अटलजी के नाम पर विश्वविद्यालय बनाया है सराहनीय कार्य है। अन्य क्षेत्रों में भी राष्ट्रभाषा को मजबूत बनाने का काम होना चाहिए। अंग्रेजी को भाषा के रूप में पढ़ना चाहिए माध्यम के रूप में हिंदी ही होना चाहिए। भारत कृषि प्रधान देश है आज एक एकड़ में 36 बोरा अनाज होता है प्राचीन समय में 56 बोरा होते थे। कारण जानकर व्यवस्था ठीक करनी चाहिए। अनुसन्धान में भारत सबसे आगे था आज विदेशों में अनुसंधान हो रहे हैं। पुनः संविधान के इस विधान भवन में सब मिलकर कार्य करें लोकतंत्र को मजबूत करें यही आशीर्वाद है।

इसके पूर्व आचार्यसंघ की भव्य अगवानी मुख्यद्वार पर विधानसभा अध्यक्ष, मुख्यमंत्री जी, मंत्रीगणों और विधायकों ने की। फिर विधान भवन का अवलोकन गुरुवर को कराया। इस अवसर पर चातुर्मास समिति के अध्यक्ष प्रमोद हिमांशु भी उनके साथ थे। इस अवसर पर आचार्यश्री ने विधानसभा के वाचनालय का निरीक्षण भी किया।

लेखक : पंकज प्रधान, **प्रस्तुतिः** अभिनव कासलीवाल, मनोज मन्नू, **प्रभारीः** सोशल मिडिया, चातुर्मास समिति, भोपाल

विश्वविख्यात गणितज्ञ श्रीमान् (प्रोफेसर) एल.सी. जैन, जबलपुर

पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश'

ज्ञान-गगन में सूरज बनकर,
फैलाया भर-पूर प्रकाश।
नक्षत्रों के संबल बनकर,
दिया उन्हें विस्तृत आकाश॥

वात्सल्य-साधुत्व-सादगी,
जीवन की पहचान बनी।
प्रोफेसर श्रीलक्ष्मीचन्द्रजी,
वंद्यनीय व्यक्तित्व धनी॥

लौह चनों से रस निकालना,
सबके वश की बात नहीं।
सागर-मंथन कर पाने की,
है सबमें सामर्थ्य नहीं॥

कोई-कोई महापुरुष ही,
यह संभव कर पाते हैं।
इनके इस पुरुषार्थ 'रत्न' को,
सादर शीस झुकाते हैं॥

सन् पचपन था, बड़ा ''मनोहर'',
''सन्मति का सन्देश'' मिला।
तभी आपकी मंगलता से,
मेरा जीवन सुमन खिला॥

जो गुलाब काँटे में खिलता,
वह सुगन्ध को पाता है।
वत्सलता का रस पी-पी कर,
वह विकसित हो जाता है॥

सुखी रहें, होवें चिरंजीवी,
चिरनिरोगता पावें।
हम कृतज्ञ हैं, आभारी हैं,
कृपा और बरसावें॥

सम्पर्क-
36, अमृत एन्क्लेव, अयोध्यानगर बायपास रोड,
भोपाल (म.प्र.) 462041
मो. 94253-72740, 98930-72575

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः।

सत्पथ-दर्पण

गतांक से आगे.....

स्व. पं. अजित कुमार शास्त्री
(पूर्व जैनगजट संपादक)

ग्यारहवीं वार्ता

तीर्थक्षेत्र

जैन संस्कृति की सुरक्षा के लिये जिस तरह हमारे मन्दिर और देव प्रतिमाएँ परम निमित्त हैं, उनके दर्शन पूजन वन्दन से जैन जनता की धार्मिक आस्था स्थिर रहती है, मानसिक शुद्धि जाग्रत होती रहती है। उसी तरह जैन संस्कृति की सुरक्षा में हामरे तीर्थ-स्थान भी बहुत उपयोगी हैं।

शुद्ध आत्म-तत्त्व को प्राप्त करने के लिये ही पाषाण की प्रतिमा को अर्हन्त भगवान की भावना से वन्दना, प्रणाम किया जाता है, उसकी अष्टद्रव्य से पूजन तथा अभिषेक किया जाता है। इस व्यवहार से भक्त अपने भगवान के वीतराग गुण का ज्ञान, मनन, अनुभव करके अमूर्तिक, शुद्ध, शान्त, वीतराग आत्मा का अवलोकन उस प्रतिमा में करता है। इस प्रक्रिया में प्रगति करता हुआ 'दासोऽहम्' (हे भगवान् मैं आपका भक्त दास हूँ) का प्रार्थी भक्त कभी अपने एकाग्र ध्यान में 'सोऽहम्' का ध्याता बन जाता है। और 'सोऽहम्' (मैं भी वैसा परम शुद्ध भगवान् हूँ।) का ध्यान प्रगति करके कालान्तर में इस भक्त को भगवान् बना देता है।

आत्मा से परमात्मा बनने में ये बातें आवश्यक हैं- अनुकूल द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव। बाजार में, सिनेमा घर में वीतराग भावना हृदय में नहीं आ सकती क्योंकि उन स्थानों का वातावरण रागभावना के अनुकूल होता है, वीतराग भावना के प्रतिकूल होता है। इसी कारण विरक्त मुनियों को ऐसे स्थानों पर रहना या ठहरना निषिद्ध है। मन्दिरों में वैसा रागद्वेष-मय वातावरण नहीं होता, अतः मंदिरों में राग-द्वेष वर्द्धक भावना प्रायः नहीं होती। वहाँ के वातावरण में वीतराग के गुणस्मरण करने की, स्वाध्याय करने की तथा शान्ति के साथ सामायिक करने की भावना होती है। इसी कारण धार्मिक स्त्री पुरुष प्रतिदिन मन्दिर में जाकर यथासम्भव धर्म-आराधना करते हैं।

ऐसी ही बात तीर्थ-क्षेत्रों के विषय में है। गृहस्थाश्रम के वातावरण में स्त्री पुरुषों का मन परिग्रह-संग्रह में, घर-व्यापार के विविध कार्यों में तथा चिन्ताओं में एवं आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान में लगा रहता है। जब वे ही स्त्री पुरुष तीर्थ-यात्रा के लिये जाते हैं तब घर-बार-व्यापार, लेन-देन की चिन्ता से, आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान से मुक्त हो जाते हैं, और जिस तीर्थ पर वन्दना के लिये वे जाते हैं वहाँ पर मुनीश्वरों ने तपश्चरण करके अपना आत्मा शुद्ध किया और अजर अमर होकर मुक्ति प्राप्त की।

गिरनार के वातावरण में भगवान नेमिनाथ का स्मरण आता है कि वे इसी पर्वत के निकटवर्ती जूनागढ़ में राजा उग्रसेन की सुन्दरी युवती गुणवती कन्या राजुल का पाणिग्रहण करने आये थे किन्तु अपनी वर-यात्रा के

के निमित्त से अर्थात् उन्हें समय पर आहार-पान न मिलने से होने वाली वेदना का विचार करके संसारी जीवन से उनको विराग हो गया और वे अपना दूल्हे का वेष बदल कर, उस तरुण वय में राज-भोग छोड़, महाव्रती नग्न साधु बन गये। उन्होंने तरुणवय में कामदेव पर ऐसी सविजय प्राप्त की, कि राजुल का अनुनय, विनय, निवेदन, रुदन भी उन्हें कामासक्त न बना पाया।

राजुल भी उनके वैराग्य से इतनी प्रभावित हुई कि उसने भी अपना जीवन संसार के राग से मोड़कर आत्म-साधना में लगा दिया। नवयौवन की उद्दाम वासनाओं को परास्त करके अटल ब्रह्मचारिणी, संसार-विरक्त साध्वी (आर्यिका) बन गई। उसने भी अपना नर-भव सफल कर लिया।

सम्मेदशिखर का वातावरण तो उससे भी अधिक प्रभावशाली है, जहाँ पर वर्तमान चौबीसी के 20 तीर्थंकरों ने और असंख्य मुनियों ने अचल शुक्लध्यान से आत्म-साधना की और संसार के आवागमन से मुक्त होकर अविनाशी स्वतन्त्रता, परम शुद्धता प्राप्त की। प्रत्येक उत्सर्पिणी के दु:षमा-सुषमा काल में समस्त तीर्थंकर यही से मुक्त होते हैं। इत्यादि विचार-धारा तथा स्वात्मचिन्तन सम्मेदशिखर के पवित्र वातावरण में जाग्रत होता है।

इसी प्रकार अन्य तीर्थ-क्षेत्रों के वातावरण में भी सांसारिक वासनाएं अस्त होकर आत्म-शोधन की भावना जाग्रत होती है।

ऐसी दशा में श्री कहान भाई का अपनी पुस्तक मोक्षमार्ग प्रकाशक की किरण के दूसरे भाग पृष्ठ 170 पर यह लिखना कैसे ठीक माना जावे कि-

''सम्मेदशिखर गिरनार आदि के वातावरण से धर्म की रुचि होती है, ऐसा मानने वाला मिथ्यादृष्टि है।''

एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य पर अच्छा या बुरा प्रभाव पड़कर अच्छा या बुरा परिणमन होता है। अग्नि अन्य द्रव्य है और मनुष्य का सजीव शरीर अन्य द्रव्य है। उस पर पर-द्रव्य अग्नि को यदि मनुष्य के हाथ पर रख दिया जाये तो उस पर-द्रव्य के निमित्त से मनुष्य व्याकुल हो जाता है, उसका हाथ जल जाता है। विष खाने से मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, औषधि खाने से रोग-शान्ति तथा भाव-शान्ति हो जाती है। मदिरा पान से ज्ञान विकृत हो जाता है।

इसी तरह पर-द्रव्य रूप क्षेत्र का भी प्रभाव आत्मा पर पड़ता है। गर्मी में मरुस्थल (रेगिस्तान) का क्षेत्र अत्यन्त गर्म बालू का होने के कराण मनुष्य की शान्ति भङ्ग कर देता है और सघन वृक्ष की छाया का क्षेत्र मनुष्य को शान्ति प्रदान करता है। यानी- शान्ति अनुभव में निमित्त कारण बनता है। नरक में साता वेदनीय कर्म का उदय भी पर-मुख रूप उदय होकर दु:खदायी होता है और स्वर्ग के क्षेत्र में असाता वेदनीय कर्म का उदय भी परमुख उदय होकर सुखदायक बन जाता है।

इसी तरह चोर, लुच्चों, गुण्डों, डाकुओं का क्षेत्र भय उत्पत्ति का कारण होता है और सज्जनों का क्षेत्र सुख शान्ति का निमित्त कारण होता है। तदनुसार तीर्थों का क्षेत्र धार्मिक परिणाम उत्पन्न करने का निमित्त है,

जबकि घर के क्षेत्र में वह प्रभाव नहीं होता।

श्रीकुन्दकुन्द आचार्य ने प्रवचनसार गाथा 255 में कहा है कि भूमि की विपरीतता से एक ही बीज की विपरीत निष्पत्ति होती है। कारण के भेद से कार्य में भेद अवश्यम्भावी है।

इस तरह कार्यकारण भाव की मान्यता में मिथ्यात्व की क्या बात है?

श्री कहान भाई भी यदा कदा (जब तब) गिरनार, सम्मेद शिखर आदि तीर्थों की यात्रा को गये हैं, यदि उन तीर्थ-स्थानों के वातावरण में धार्मिक भाव उत्पन्न कराने की निमित्त-कारणता नहीं है तो उन्होंने यह प्रयास क्यों किया?

मन्दिर, स्वाध्यायशाला, तीर्थस्थान आदि यदि धर्मक्षेत्र न हो तो महान ज्ञानी ऋषि, मुनि, विद्वान क्यों वहां पर जाने का कष्ट करें। श्री कुन्दकुन्दाचार्य ने भी गिरनार तीर्थ की यात्रा अपनी भाव-शुद्धि करने के लिए की थी। इसी तरह जिस प्रकार की भाव-शुद्धि श्रवण बेलगोला तीर्थ स्थान पर भगवान बाहुबली के दर्शन करने से होती है, उस तरह की भाव-शुद्धि अन्य स्थान पर नहीं होती। भिन्न-भिन्न क्षेत्रों का वातावरण भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है।

इस तरह तीर्थस्थानों के वातावरण में धर्म-रुचि उत्पन्न कराने का निमित्त न मानना गलत है। तीर्थ-यात्री के मन में तीर्थस्थान में जो धर्मरुचि होती है, उस धर्मरुचि में तीर्थस्थान निमित्त कारण है।

श्री पं. सदासुख जी कृत रत्नकरण्ड श्रावकाचार की टीका, बुधजन बारह भावना और समाधिमरण के वाक्य कहान पंथ की उक्त बात का समर्थन नहीं करते। उनका तो आशय केवल इतना है कि मनुष्य को धर्मलाभ तभी होता है जबकि तीर्थ-स्थान, मन्दिर आदि बाहरी निमित्त कारणों के साथ अन्तरंग निमित्त कारण भी क्रियाशील हों। जैसे कि सम्यक्त्व की उत्पत्ति में नियमसार गाथा 53 के अनुसार अन्तरंग और बहिरंग दोनों प्रकार के निमित्त कारणों का होना आवश्यक बतलाया गया है।

रत्नकरण्ड श्रावकाचार के श्लोक 119 में पूजन का फल मोक्ष बतलाया है, उसकी टीका को श्री पं. सदासुखदास जी ने लिखा है-

''वीतराग सर्वज्ञ को आराधन करता तो कर्म के बन्ध का नाश करि स्वाधीन मोक्ष रूप आत्मा कूँ प्राप्त होता है। तातै संसार के समस्त दुःखों का नाश करने वाला जिनेन्द्र का पूजन ही करो।''

कोई लड़का पाठशाला में जाकर पढ़े नहीं, वहाँ खेलता कूदता रहे, दंगा मचाता रहे तो इसका अभिप्राय यह नहीं है कि पाठशाला का क्षेत्र ज्ञान-वृद्धि का निमित्त कारण नहीं है। हजारों लाखों करोड़ों विद्यार्थी पाठशालाओं स्कूलों कॉलेजों के निमित्त से विद्वान बनकर तैयार होते हैं। ऐसी ही बात तीर्थ-क्षेत्रों के विषय में है।

इस कारण कहानपंथ साहित्य की ग्यारहवीं बात भी कार्यकारण भाव के विरुद्ध होने से तथा आगम-विरुद्ध होने से गलत है। भक्ति-पाठों में तीर्थ क्षेत्रों का वन्दना-पाठ धार्मिक भावना जाग्रत करने के उद्देश्य से ही लिखा है।

बारहवीं वार्ता

जीओ और जीने दो

अनादि काल से संसारी जीव कर्मबन्धन से बँधा हुआ, आयु कर्म के अनुसार जन्म-मरण करता हुआ चला आ रहा है। वह आयु कर्म के उदय से जीवित रहता है और आयु कर्म के क्षय से उस संसारी जीव का मरण होता है, ऐसा नियम है।

परन्तु इस नियम का एक अपवाद भी है, जिन मनुष्यों, पशु-पक्षियों, कीड़े-मकोड़े आदि जीवों की आयु निकाचित (निरुपक्रम) नहीं होती उनकी मृत्यु आयु-कर्म समाप्त होने से भी पहले (आकाल मृत्यु) हो जाती है।

इस अपमृत्यु (आकाल मरण) का विधान भावपाहुड़ की गाथा 25-26-27 में तथा तत्त्वार्थसूत्र अध्याय 2 सूत्र 53 की टीका राजवार्तिक आदि आर्ष ग्रन्थों में पाया जाता है।

अतएव तलवार, बन्दूक आदि अस्त्र-शस्त्रों द्वारा अन्य जीवों का तथा स्वयं अपना भी असमय में (आयु समाप्त होने से पहले) प्राणघात हो सकता है। उदाहरण स्वरूप जैसे- वन पर्वतों में सिंह, बाघ, चीते, भेड़िये आदि हिंसक जीव हिरण, नीलगाय, खरगोश आदि जीवों को मार कर खाते रहते हैं। मनुष्य प्रतिदिन लाखों करोड़ों मछलियों को, बूचड़खानों में गायों, बकरियों, सूअरों आदि को तथा कबूतरों आदि पक्षियों को बंदूक छुरी आदि से मार कर उनका मांस खाया करते हैं। असंख्य रेशम के कीड़े तथा अन्य प्रकार के कीड़े-मकोड़े विविध प्रकार से मारे जाते हैं।

जब कि सभी मनुष्य, पशु पक्षी सुख से जीना चाहते हैं, कोई भी मरना नहीं चाहता। क्योंकि मरने से प्रत्येक जीव को कष्ट होता है। उस कष्ट से बचाने के लिए श्री जिनेन्द्र भगवान ने अन्य जीव का तथा अपना प्राणघात न करने का उपदेश दिया है। समस्त धर्म- ग्रन्थों में दया करने, अहिंसा पालन करने का उपदेश है। जैन धर्म तो 'अहिंसा परमो धर्म:' की ध्वजा फहराता है।

शास्त्रों में गृहस्थों और मुनियों को क्रम से अहिंसा अणुव्रत और अहिंसा महाव्रत आचरण करने का विधान है।

श्री कुन्दकुन्द आचार्य ने बोधपाहुड़ की 25 वीं गाथा में 'धम्मो दयाविसुद्धो' (यानी-धर्म दयामय होता है), मोक्षपाहुड़ की 90 वीं गाथा में 'हिंसारहिये धम्मे' (धर्म हिंसारहित अहिंसा रूप है) लिखा है। उसी का सारांश हिन्दी भाषा में कहा जाता है कि-

जीओ और जीने दो (Live and let live)

अर्थात् न तो तुम आत्महत्या (अपनी प्राणहिंसा) करो और न अन्य जीव की हिंसा करो।

इस पवित्र धर्म वाक्य के विषय में श्री कहान भाई अपनी पुस्तक मोक्ष-मार्ग किरण (दूसरा भाग) में पृष्ठ 184 पर लिखते हैं-

''जियो और जीने दो अज्ञानी कहते हैं।''

श्री कहान भाई का यह लिखना यदि ठीक हो तो इसका अभिप्राय तो यह हुआ कि '**मरो या मारो**' ऐसा ज्ञानी कहते हैं। परन्तु ऐसी बात अभी तक किसी भी ज्ञानी ने नहीं कही। चरणानुयोग के जितने भी मूलाचार, अनगारधर्मामृत, रत्नकरण्डश्रावकाचार तत्त्वार्थसूत्र, सर्वार्थसिद्धि, राजवार्तिक, श्लोकवार्तिक, चारित्र सार, आचारसार, चारित्रपाहुड़, रयणसार, निमसार, पुरुषार्थसिद्धि-उपाय, वसुनंदिश्रावकाचार, प्रश्नोत्तर श्रावकाचार, आदि श्रावक-चर्या एवं मुनिचर्या के आर्ष ग्रन्थ हैं उन सब में यही उपदेश आदि से अन्त तक भरा हुआ है कि 'न तो आत्मघात करो और न अन्य जीवों का घात करो। अपनी द्रव्यहिंसा और भावहिंसा मत होने दो तथा अन्य प्राणियों के द्रव्यप्राणों और भावप्राणों की रक्षा करो, स्वप्न में भी किसी को दु:ख न दो।'

इसी अहिंसा धर्म को अधिकाधिक सुरक्षित रखने के लिए गृहस्थों को अहिंसा के साथ-साथ सत्य आदि 4 अणुव्रतों, 3 गुणव्रतों, 4 शिक्षाव्रतों का आचरण करना बतलाया है और मुनियों के अहिंसा महाव्रत को पुष्ट करने के लिए ही अहिंसा के साथ सत्य आदि 4 महाव्रत, 5 समिति, 3 गुप्ति के आचरण करने का विधान किया है।

ये समस्त ग्रन्थकर्त्ता स्वयं महान ज्ञानी तथा उच्च आचार-धारक थे ही, किन्तु इसके साथ ही उन्होंने जो कुछ शास्त्रों में लिखा, वह गुरु-परम्परा से प्राप्त केवलज्ञानी जिनेन्द्र की वाणी के अनुसार ही लिखा है, अपने पास से कल्पना करके कुछ नहीं लिखा।

इसका अभिप्राय यही है कि '**जियो और जीने दो**' का उपदेश परम्परा से केवलज्ञानी अर्हन्त भगवान का दिया हुआ है और ज्ञानी आचार्यों ने उसे अपने ग्रन्थों में अच्छे विस्तार से लिखा है।

मद्यपान, मांस-भक्षण, मधु-भक्षण तथा अन्य अभक्ष्यों के भक्षण का त्याग भी अहिंसाव्रत के निर्दोष पालन करने के लिए ही बताया गया है। रात्रिभोजन त्याग, जलगालन का विधान भी '**जियो और जीने दो**' की भावना से किया गया है। पर्व दिनों में उपवास, एकाशन, सचित्तवस्तु त्याग, ब्रह्मचर्य पालन, आरम्भत्याग आदि का आचरण भी जीवों की रक्षा करने, अहिंसा को सम्पुष्ट करने के उद्देश्य से किया जाता है। इत्यादि।

प्राय: सब तरह से केवलज्ञानियों का उपदेश तथा द्वादशांग-वेत्ताओं एवं अन्य महान ज्ञानी ऋषियों महर्षियों का तो '**जिओ और जीने दो**' के अनुरूप ही उपदेश है। क्या ये सब श्री कहान भाई के कथन अनुसार अज्ञानी हैं?

तर्क

आपने अपने कथन को पुष्ट करते हुए लिखा है-

''किसी का जीवन किसी कर के आधीन (अधीन) नहीं है। शरीर या आयु से जीना यह आत्मा का जीवन नहीं है। अपनी पर्याय में पुण्य पाप के भाव स्वभाव की दृष्टिपूर्वक होने देना और ज्ञाता दृष्टा (द्रष्टा) रहना उसका नाम जीवन है।''

श्री कहान भाई अपने कथन में जो सबसे बड़ी गलती करते हैं वह यह है कि वे जो कुछ भी कहते हैं

उसमें नय-विभाग नहीं करते। प्रत्येक बात में निश्चय नय का एकान्त रखते हैं, व्यवहार नय को सर्वथा छोड़ देते हैं, जबकि सिद्धांत: वे छोड़ नहीं सकते। निश्चय नय का विवेचन करना उनकी शक्ति से बाहर की चीज है। तथा जिनको वे उपदेश देते हैं वे एवं भाई जी उस निश्चय नय-अनुसार आचरण से योजनों दूर हैं। क्योंकि आत्मा जब निश्चय नय से बोलता नहीं है, शरीर बोलता है, तो निश्चय नय का वर्णन भी व्यवहार नय द्वारा ही श्री कहान भाई करते हैं। निश्चयनय से तो वे न एक अक्षर भी बोल सकते हैं और न एक अक्षर लिख सकते हैं।

ज्ञाता द्रष्टा

श्री कहान भाई अपने प्रवचन में जिस 'ज्ञाता और द्रष्टा' बनने का पद-पद पर उपदेश करते हैं, वह 'ज्ञाता द्रष्टा बनना' इस युग में केवल एक कहने तथा अपना मन प्रसन्न करने की चीज है, आचरण की चीज नहीं है।

जब तक मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्म निर्मूल नाश न हो जावें तब तक कोई भी व्यक्ति ज्ञाता द्रष्टा नहीं बन सकता। मोहनीय कर्म का उदय कषाय भावों से सदा व्याकुल बनाये रहता है, ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म आत्मा को सच्चा ज्ञाता द्रष्टा बनने से रोके हुए हैं, अन्तराय कर्म ज्ञाता द्रष्टा बनने की तथा स्वरूप में स्थिर रहने की शक्ति को रोके हुए हैं, ऐसी दशा में संसारी, गृहस्थ जीव की कषायरंजित, अस्थिर, चंचल, निर्बल मनोवृत्ति में ज्ञाता द्रष्टा बनने की शक्ति कहाँ से आ सकती है? वीतराग भाव उसमें एक क्षण भी नहीं प्रगट हो सकता।

ऐसी दशा में कोई भी महान व्यक्ति (वह चाहे कोई मुनीश्वर हों या स्वयं श्री कहान भाई हो एवं चाहे मुमुक्षु संज्ञा-अलंकृत उनके अनुयायी हों) सरागसम्यक्त्व और सराग-संयम-रूप पुण्य-भावों के अतिरिक्त उच्च भाव कर ही नहीं सकते। श्री कहान भाई तथा उनके कोई भी अनुयायी अव्रती होने के कारण '**सराग संयम**' के भाव भी नहीं कर सकते।

सराग सम्यक्त्व भी निश्चय नय तथा व्यवहार नय के मध्यस्थ व्यक्ति को होता है। निश्चय नय के एकान्तवादी या व्यवहारनय के एकान्तवादी के सराग सम्यक्त्व भी नहीं होता। शुद्ध सम्यक्त्व अपरनाम वीतराग सम्यक्त्व तो राग भाव के अभाव में दशवें गुणस्थान से ऊपर ही होता है।

ऐसी दशा में श्री कहान भाई प्राय: अपने प्रत्येक पैराग्राफ में जो पुण्य भाव को छोड़ देने का उपदेश देते हैं, सो क्या वे उस पुण्य-भाव से कभी एक क्षण भी स्वयं छूट सकते हैं? इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर वे यदि आत्म-अवलोकन करके स्वच्छ हृदय से दें, तो सम्यग्दृष्टि के पुण्य को त्याज्य अपने मुख से वे कभी न कह सकेंगे। यों अपने मन की और अपने आत्मा की वास्तविक दशा को प्रच्छन्न रख कर मुख से चाहे कुछ भी कहें।

अत: ज्ञाता द्रष्टा बनना और पुण्य भाव का त्याग करना अभी तो बहुत दूर की बात है। इस संसारी दशा में जीव की स्थिति या स्थिरता को शरीर आयु कर्म (द्रव्य प्राणमयी) के साथ यथासम्भव दर्शन उपयोग, ज्ञान-उपयोग मान कर ही चलना होगा। जब संसारी जीव एक क्षण भी शरीर (पाँचों शरीरों में से यथासम्भव) और आयु कर्म के बिना जीवन की बात करना कोरा भ्रम है। समस्त आचार-व्यवस्था, हिंसा और अहिंसा की

परिभाषा सशरीर संसारी जीव को लेकर ही तो है। यदि वास्तविक परिस्थिति के प्रतिकूल, व्यवहार नय का सत्तानाश करके संसारी जीव का जीवन शरीर और आयु से रहित मान लिया जाय, तो न कोई हिंसा रहती है और न कोई अहिंसा रहती है। फिर न दिव्यध्वनि आवश्यक है और न किसी ग्रन्थ के प्रवचन, उपदेश स्वाध्याय, देव दर्शन, पूजन की आवश्यकता है।

शरीर के बिना संसारी आत्मा भी संसार में अन्धा, बहरा, गुँगा, लूला,, लंगड़ा, अमनस्क (असंज्ञी) होकर पत्थर की तरह जहाँ का तहाँ पड़ा रहेगा। जीव तो मुक्त होने के पश्चात् स्वतन्त्र होता है, संसारी-अवस्था में वह स्वाधीन नहीं। कीड़े-मकोड़े, जलचर, थलचर, नभचर जीवों का जीवन प्रतिदिन शिकारियों तथा माँस-भक्षियों द्वारा असमय में समाप्त होता रहता है।

यदि संसारी जीवों को अन्य जीव आयु-समाप्ति से पहले न मार सके, तो गौशाला, औषधालय,पिंजरापोल, चिकित्सालय (अस्पताल), औषध-उपचार आदि सब बातें व्यर्थ हो जावेंगी। छोटे बच्चे को उसकी माता दूध न पिलावे तो बच्चा जी नहीं सकता। ऐसे हजारों अवैध (विधवाओं तथा कुमारी कन्याओं से हराम से उत्पन्न हुए) बच्चे पाप छिपाने के लिए जहाँ-तहाँ छोड़ दिये जाते हैं, जो कि भूख, शीत, आतप आदि से मर जाते हैं। यदि वैसे छोड़े हुए बच्चे को कोई व्यक्ति दया करके पाल लेता है तो वह बच भी जाता है। इसलिये अन्य निर्बल जीवों को मारने या मृत्यु से बचाने का प्रयत्न किया जाता है।

आधार

मोक्षमार्ग प्रकाशक में पृ. 332 पर पं टोडरमल जी ने मिथ्या दृष्टि को लक्ष्य करके मारने, बचाने का अध्यवसान (मिथ्यात्त्व रूप अभिमान कषाय) छुड़ाने के अभिप्राय से लिखा है। मोक्षमार्ग प्रकाशक अधूरा ग्रन्थ है। उसमें प्रथम ही सम्यग्दर्शन का प्रकरण लेकर लिखा गया है, वह भी पूर्ण नहीं हो सका। अत: उसमें आचरण-सम्बन्धी बातों पर ग्रन्थकार विवेचन नहीं करने पाये। यदि वे चारित्र का प्रकरण भी पूरा लिख देते तो मोक्षमार्ग प्रकाशक ग्रन्थ हिंसा-अहिंसा आदि के निर्णय के लिए रखना उचित था।

गोम्मटसार कर्मकाण्ड की टीका में गुणस्थान-क्रम से बन्ध-व्युच्छित्ति बताते हुए श्री पं. टोडरमल जी ने स्वयं पुण्य भाव वाले पाँचवें छठे गुणस्थान में कर्मों का संवर होना लिखा है। तदनुसार मोक्षमार्ग प्रकाशक के 7वें अध्याय में उन ही पं. टोडरमल जी ने जो अहिंसा आदि पाँचवें छठे गुणस्थान के चारित्र को केवल बंध का कारण कहा है उन दोनों कथनों में परस्पर विरोध आता है। अत: मोक्षमार्ग प्रकाशक के कथन को चारित्र के विषय में साक्षी रूप से उपस्थित करना उचित नहीं।

तथा मोक्षमार्ग प्रकाशक का दिया गया आधार मिथ्यादृष्टि जीव-सम्बन्धित उल्लेख का है, इस कारण भी उसे साक्षी में न रखना चाहिये।

इसके सिवाय पुण्य रूप सराग-संयम से श्री पं. टोडरमल जी ने मोक्षमार्ग प्रकाश में पुण्य भाव से संवर, निर्जरा होना भी पृ. 334 तथा 340 पर लिखा है-

ताका समाधान- यह भाव (पुण्य) मिश्ररूप है, किछू वीतराग भया है किछू सराग रहता है। जे

अंश वीतराग भए तिन करि संवर है। अर जे अंस सराग रहे तिन करि बंध है ॥ पृ.334 ॥

स्तोक शुद्धता भए शुभोपयोग का भी अंश रहे, तो जेती शुद्धता भई ताकरि तो निर्जरा है अर जेता शुभ भाव है ताकरि बंध है ऐसा मिश्रभाव युगपत् हो हैं, तहाँ बंध वा निर्जरा दोऊ हों हैं ॥ पृ.340 ॥

2-समयसार की जो 254-255-256 नं. की गाथाओं का आधार दिया है, उस विषय में यह कहना है कि पं. वंशीधर जी के द्वारा उद्धृत समयसार के इस प्रमाण को यदि श्री कहान भाई हृदय से सत्य मानते हैं, तब उन्हें जीवों के सुखी दुखी होने में कर्म को निमित्त कारण मान लेना चाहिये जिसको कि वे मानते नहीं है, जैसा कि उनके इसी ट्रैक्ट के 14 वे कथन से स्पष्ट है।

जीवों के सुखी दु:खी होने से साता असाता वेदनीय कर्म का उदय अन्तरंग निमित्त कारण है, जिसका विधान अध्यवसान छुड़ाने के अभिप्राय से इन गाथाओं में ग्रन्थकार ने किया है। बहिरंग निमित्त कारण उपकारी दयालु मनुष्य (किसी जीव को मरते समय बचाने में) तथा दुष्ट शिकारी आदि (किसी जीव को सताने मारने आदि में) का उल्लेख इन गाथाओं में नहीं है। कर्मों का उदय व उदीरणा भी तो वाह्य द्रव्य क्षेत्र काल भव और भाव के निमित्त से होती है। (सर्वार्थसिद्धि 9-36)

समयसार गाथा 46 की टीका में श्री अमृतचन्द्र आचार्य ने लिखा है-

व्यवहार के बिना हिंसा का अभाव ठहरेगा और हिंसा के अभाव में बंध के अभाव का प्रसंग आ जायगा। क्योंकि निश्चय नय से शरीर से जीव को भिन्न मान लेने पर, जैसे भस्म को मसल देने से हिंसा का अभाव है, उसी प्रकार,त्रस स्थावर जीवों को नि:शंकतया मसल देने से, कुचल देने में भी हिंसा नहीं होगी। बन्ध के अभाव में मोक्ष का भी अभाव हो जायेगा। अत: यह मानना ही चाहिए कि त्रस स्थावर जीवों के मारने में हिंसा होती है।

प्रकरण अनुसार समयसार-कार श्री कुन्दकुन्द आचार्य ने भी चारित्र पाहुड़, नियमसार आदि ग्रन्थों में दया, अहिंसा के द्वारा जीवों की रक्षा करने का विधान किया ही है।

अत: ये दोनों आधार '**जियो और जीने दो**' के विरुद्ध नहीं हैं।

क्रमश:.............

भाव विज्ञान पत्रिका के इस सितम्बर 2016 के पर्व विशेषांक हेतु सहयोग देने वाले इंजीनियर श्री महेन्द्र जैन, भोपाल; श्री अरुगदास जैन, तिरुवान्नामलै, तमिलनाडु एवं पावन वर्षायोग समिति 2016 मण्डीदीप के लिए प्रकाशक की ओर से धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

पारसचन्द से बने आर्जवसागर

गतांक से आगे.........

–आर्यिकारत्न 105 श्री प्रतिभामति माता जी

तत्पश्चात् गुरुदेव आर्जवसागरजी महाराज के ससंघ का सुदूर से पर्वत माला पर स्थित जिनालयों की टोंकों को निहारते हुए फाल्गुन अष्टाह्निका पर्व की चतुर्दशी को प्रात: काल की मंगल बेला में मधुबन में मंगल प्रवेश पूर्वक पदार्पण हुआ। वहाँ पर समाज के लोगों ने भव्य आगवानी की और भव्यों के नम्र निवेदन से दोनों कोठियों के दर्शनकर तेरहपंथी कोठी में ठहरे। मध्यान्ह में चतुर्दशी पर्व के दिन पाक्षिक प्रतिक्रमण किया। और दूसरे दिन फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा को प्रात:काल 6:00 बजे मुनिवर पर्वत की वन्दना के लिए सभी लोग बीच में मिले मन्दिरों के दर्शन करते जा रहे थे और साथ ही पर्वत पर प्रभु की जय-जयकार लगा रहे थे बीच-बीच में ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनन्तानन्त परम सिद्धभ्यो नम: मंत्र को उच्च स्वरों में बोलते जा रहे थे। पश्चात् शीतल नाला, गंधर्व नाला आदि को पार करते हुए करीब 7:50 बजे चौपड़ा कुंड पर बने जिनालयों में पार्श्वनाथ भगवान का दर्शन कर गणधर टोंक पर पहुँच गये। सभी लोगों ने उच्च स्वर में चौबीस भगवानों की एवं अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी की जय-जयकार लगाई। मानो ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरु पर्वत या स्वर्ग पर पहुँच गये हों। जहाँ से अनादिकालिक अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठियों ने मोक्ष पाया ऐसे पर्वत की रज को पाकर गुरुवर के साथ सभी को ऐसे अपूर्व आनन्द का अनुभव हुआ जो वचनों में नहीं कहा जा सकता। यह गुरुवर आर्जवसागरजी के जीवन में सम्मेदशिखरजी की वन्दना का प्रथम अवसर था। ऐसे शुभ दिन सर्व प्रथम प्रात: 8:00 बजे की बेला में पूर्व दिशा की मुख करके बने गणधर टोंक में बने 35 चरणों का बड़े भाव विभोर होकर दर्शन किया और प्रसन्न चित्त के साथ सर्व गणधरों के चरणों में त्रि बार नमोस्तु कर कायोत्सर्ग किया, सिद्ध भक्ति पढ़ी फिर साथ में जो शुद्ध वस्त्र में श्रावक लोग आये उनके द्वारा प्रासुक जल से किये गये चरणों का अभिषेक का गंधोदक गुरुवर के साथ सभी लोगों ने माथे पर लगाया। फिर टोंक की तीन-तीन प्रदक्षिणायें सभी ने लगाईं और भक्ति सह गुण-गाते हुए पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने हुए ज्ञानधर कूट पर स्थित काले रंग के चरण वाली कुन्थुनाथ टोंक पर पहुँचे। वहाँ पर भी पूर्व की भांति नमोस्तु आदि क्रियायें कर फिर आगे बढ़कर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने मित्रधर कूट पर काले रंग के चरण वाली नेमिनाथ टोंक पर पहुँचे। वहाँ भी कायोत्सर्ग आदि क्रियायें कर फिर दक्षिण की ओर मुख करके बने नाटक कूट में काले रंग की चरण वाली अरहनाथ की टोंक पर पहुँचे। वहाँ भी भक्ति आदि क्रियायें कर फिर बाजू में ही दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बने संबल कूट पर काले रंग के चरण वाली मल्लिनाथ टोंक पर गये। वहाँ भी नमोस्तु आदि क्रियायें सम्पन्न कर फिर दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बने संकुल कूट पर काले रंग के चरण वाली श्रेयांसनाथ की टोंक पर पहुँचे। वहाँ भी नमोस्तु-परिक्रमा आदि क्रियायें कर फिर थोड़े ऊपर चढ़कर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने सुप्रभकूट पर सफेद रंग के चरण वाली पुष्पदन्त भगवान की टोंक पर पहुँचे। वहाँ भी कयोत्सर्ग आदि क्रियायें कर फिर थोड़ा उतरकर दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बने मोहनकूट पर काले रंग के चरण वाली पद्मप्रभु भगवान की टोंक पर गये और वहाँ भी नमोस्तु आदि क्रिया कर फिर थोड़ा नीचे उतरकर दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बने निर्जरकूट पर काले रंग के चरण वाली

मुनिसुव्रतनाथ भगवान की टोंक पर पहुँचे और वहाँ भी स्तुति, भक्ति आदि सम्पन्न कर फिर नीचे उतरकर और फिर चढ़ाई चढ़कर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने ललितकूट पर काले रंग के चरण वाली चन्द्रप्रभु टोंक पर पहुँचे, बस; वहाँ की हवा मिलते ही सारी थकान दूर हो गयी वहाँ भी नमोस्तु, कायोत्सर्ग आदि किया तथा फिर पुन: उतरकर; फिर चढ़कर दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बने सफेद रंग के सबसे बड़े चरण वाली आदिनाथ टोंक पर पधारे और वहाँ भी भक्ति आदि की तथा फिर थोड़ा और ऊपर चढ़कर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने विद्युतप्रभ कूट पर काले रंग के चरण वाली शीतलनाथ टोंक पर पहुँचे वहाँ भी नमोस्तु आदि कर फिर बाजू में ही दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बने स्वयंप्रभ कूट पर काले रंग के चरण वाली अनन्तनाथ टोंक पर पहुँचे वहाँ भी स्तुति भक्ति की और फिर पुन: शीतलनाथ टोंक का दर्शन किया। फिर थोड़ा नीचे उतरकर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने धवलकूट पर सफेद रंग के चरण वाली संभवनाथ टोंक पर पहुँचे। वहाँ भी नमोस्तु आदि सम्पन्न की फिर उतरते हुए जल मन्दिर के पास से दूसरे रास्ते से ऊपर चढ़कर पश्चिम दिशा की ओर मुख करके बने सफेद रंग के पाँच चरण युगलों वाली वासुपूज्य भगवान की टोंक पर पहुँचे। वहाँ भी स्तुति भक्ति आदि को कर फिर वहाँ से दक्षिण की ओर ऊपर चढ़ते हुए पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने आनन्द कूट पर काले रंग के चरण वाली अभिनन्दननाथ टोंक पर पहुँचे। वहाँ भी नामेस्तु आदि करके पश्चात् पुन: लौटकर नीचे उतर आये और जल मंदिर से होते हुए ऊपर चढ़कर कुन्थुनाथ टोंक का पुन: दर्शन करके फिर गणधर टोंक के दर्शनकर बाजू में ही दक्षिण दिशा की ओर मुख करके बने सुदत्तवर कूट पर काले रंग के चरण वाली धर्मनाथ टोंक पर पहुँचे। वहाँ भी नमोस्तु, कायोत्सर्ग आदि क्रिया की। फिर बाजू में ही पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने अविचलकूट पर काले रंग के चरण वाली सुमतिनाथ टोंक पर पहुँचे वहाँ भी भक्ति आदि की। फिर थोड़े चढ़कर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने कुन्दप्रभ कूट पर काले रंग के चरण वाली शांतिनाथ टोंक पर पहुँचे, वहाँ पर भी नमोस्तु आदि क्रिया कर फिर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने सबसे छोटे और सफेद रंग वाले चरण वाली महावीर टोंक पर पहुँचे और वहाँ भी कायोत्सर्ग आदि किया। फिर थोड़े ऊपर चढ़कर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने सुवीरकूट पर काले रंग के चरण वाली विमलनाथ टोंक पर पहुँचे, वहाँ भी नमोस्तु आदि किया। पश्चात् बाजू में बने पूर्व दिशा की ओर मुख करके बने प्रभासकूट पर काले रंग के चरण वाली सुपार्श्वनाथ टोंक पर पहुँचे और वहाँ भी स्तुति, भक्ति आदि की। पुन: विमलनाथ टोंक का दर्शन करते हुए नीचे उतरकर फिर चढ़ाई चढ़कर उत्तर दिशा की ओर मुख करके बने सिद्धवरकूट पर सफेद रंग के चरण वाली अजितनाथ टोंक पर पहुँचे वहाँ पर भी नमोस्तु, कायोत्सर्ग आदि किया। फिर उत्तर दिशा की ओर मुख करके बने सफेद रंग के तीन चरण युगलों वाली नेमिनाथ टोंक पर पहुँचे, वहाँ भी नमोस्तु आदि किया। पश्चात् चढ़ाई चढ़कर सबसे ऊँचे उत्तर दिशा की ओर मुख करके बने सुवर्णभद्रकूट पर काले रंग के चरण वाली पार्श्वनाथ टोंक पर पहुँचे, वहाँ पर नमोस्तु, सिद्ध भक्ति और कायोत्सर्ग आदि कर प्रदक्षिणा करके श्रावकों द्वारा किये गये अभिषेक को देखकर गंधोदक ग्रहण किया। इस तरह प्रात: 10 बजे तक सम्पूर्ण वंदना सम्पन्न हुई फिर साढ़े 10 बजे तक स्वर्णभद्रकूट पर ही ठहरकर पार्श्वनाथ के दर्शन, भक्ति, निर्वाण काण्ड कायोत्सर्ग रूप में प्रशस्त ध्यान करते हुए पर्वत से उतरते हुए मधुबन की ओर गमन किया और करीब 12 बजे समवसरण मन्दिर में आ गये।

श्रावक लोग तो चौकों की ओर प्रस्थान कर गये और महाराज श्री और व्रती लोगों ने समवसरण मन्दिर में ही सामायिक की। फिर करीब डेढ़ बजे आहारचर्या के लिए निकले। तेरहपंथी कोठी में आहार चर्या के उपरान्त वहीं पर ठहरे। दो दिनों में इसी तरह तीन वंदनायें सम्पन्न कीं, और एक दिन प्रवचन के समय तेरहपंथी कोठी में मध्यप्रदेश से शिखरजी तक यात्रा में साथ आये लोगों का सम्मान यात्रा की पुण्यार्जक शीलरानी नायक ने स्मृति चिन्ह प्रदान कर और तेरहपंथी कोठी के जिनमन्दिर के लिए स्वर्णिम लघु छत्र भी दान में दिया गया। पश्चात् अगले दिन प्रवचन के पूर्व तेरहपंथी कोठी के कमेटी के लोगों ने भी खुशी पूर्वक तीर्थ यात्रा कराने वाली अम्माजी को लेकर यात्रा कराने वालों का भी सम्मान किया।

इसी तरह एक सप्ताह रुकने के उपरान्त महावीर जयन्ती के निमित्त पालगंज मन्दिर का दर्शन करते हुए गुरुदेव मुनिश्री आर्जवसागरजी ससंघ ऋजुकूला नदी को (जहाँ पर महावीर भगवान को केवलज्ञान हुआ था) पार करके गिरडीह नगर पहुँचे।

ग्रीष्मकाल सन् 2006 में गिरडीह नगर में भव्य मंगल प्रवेश होने के उपरान्त दि. जैन समाज की कमेटी के द्वारा विशेष रुकने का निवेदन होने पर प्रतिदिन गुरुवर के प्रवचनों द्वारा विशेष प्रभावना हुई। एक शुभ दिन धार्मिक पाठशाला का उद्घाटन भी किया गया और महावीर जयन्ती महोत्सव और श्री जी का रथोत्सव और गुरुवर का दीक्षादिवस विशेष प्रवचनों पूर्वक सम्पन्न हुआ। एक दिन सम्मेद शिखरजी की समाज के द्वारा सम्मेदशिखरजी पुनः पधारने हेतु निवेदन किया। और एक दिन उत्तरप्रदेश प्रकाश भवन के कमेटी द्वारा नवीन जिनालय का पंचकल्याणक में पधारने हेतु विशेष निवेदन किया गया और साथ ही झारखण्ड की राजधानी राँची नगर के वरिष्ठ कमेटी के लोगों द्वारा अपने नगर में वर्षायोग हेतु पधारने के लिए श्रीफल अर्पित किये गये। फिर पुनः मुनिवर ससंघ सहित सि.क्षे. सम्मेदशिखरजी पधारे। तेरहपंथी कोठी में ठहर करके जैनियों के घर-घर में आहारचर्या होते हुए 11 वन्दनायें सम्पूर्ण कीं और पर्वत की एक परिक्रमा भी सम्पन्न हुई और शुभ मुहूर्त में बड़े उत्साह पूर्वक अपार जन समूह के बीच बड़ी प्रभावना पूर्वक यू.पी. प्रकाश भवन का भव्य पंचकल्याणक जून 2006 में महोत्सव सम्पन्न हुआ।

यह पंचकल्याणक वरिष्ठ प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचन्द्र पुष्प एवं पं. ब्र. जयकुमार 'निशान्त' के निर्देशन में सम्पन्न हुआ। इस पंचकल्याणक में जीवंधर जैन, गाजियाबाद और विजयकुमार जैन, अहमदाबाद आदि ने भी अपनी सक्रिय भूमिका निभाई। इस पंचकल्याणक में अनेक धार्मिक कार्यक्रम हुये। जिसमें एक दिन 'सम्यग्दर्शन' के विषय पर विद्वत् संगोष्ठी हुयी। जिसमें प्रा. नरेन्द्र प्रकाश जैन, फिरोजाबाद; पं. गुलाबचन्द पुष्प, ब्र. जयकुमार 'निशान्त' आदि ने अपने विषयों का प्रस्तुतिकरण किया और अन्त में गुरुवर आर्जवसागरजी से समीक्षात्मक उद्‌बोधन प्राप्त हुआ। इसी तरह एक दिन धार्मिक कवि सम्मेलन भी सम्पन्न हुआ। जिसमें प्रा. नरेन्द्रप्रकाश जी जैन, श्री शिखरचन्दजी जैन (मुनिश्री के पूर्व पिताजी), पथरिया दमोह आदि को लेकर अनेक कवियों ने अपनी कविताओं की प्रस्तुति दी। अन्त में महाराजश्री ने भी अपनी आध्यात्मिक कविताएँ सुनायीं। इसी पंचकल्याणक में तमिलनाडु के तिरुवन्नामलै नगर से पधारे श्री अरुगदास जैन, श्री सुकुमारन् आदि अनेक लोग अपने नगर में नव निर्मित जिनालय की प्रतिष्ठा हेतु सर्व प्रतिमाओं को लाकर कार्यक्रम में सम्मिलित हुये।

गुरुवर आर्जवसागरजी के कर कमलों से उन जिनबिम्बों की भी प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। कार्यक्रम में अन्त में कलशारोहण बिम्ब स्थापना और रथ यात्रा भारत के कोने-कोने से आये भव्य लोगों के बीच बड़ी प्रभावना पूर्ण ढंग से सम्पन्न हुई। यहाँ तक कि सम्मेदशिखरजी के परिसर में रहने वाले आदिवासी पुरुष, महिलाओं ने भी भक्ति पूर्वक उत्साह दिखाते हुए नृत्य-गान आदि रूप से सांस्कृतिक कार्यक्रमों का प्रस्तुतिकरण किया। इस पंचकल्याणक के उपरान्त मधुबन समाज के द्वारा वर्षायोग हेतु नम्र निवेदन किये जाने पर भी झारखण्ड की राजधानी राँची जैन समाज के द्वारा वर्षायोग हेतु किये गये पुन: पुन: निवेदन के उपरान्त गुरुवर मुनिश्री आर्जवसागरजी का ससंघ विहार राँची की ओर हो गया।

क्रमशः.......

●●●●●

वरदान

हनुमानसिंह गुर्जर

प्रथम वंदना उस माँ की, जिसने बचपन में शिक्षा दी होगी।
शत्-शत् नमन है उन चरणों में, जिस गुरु ने दीक्षा दी होगी॥
कैसा नक्षत्र-योग रहा होगा, जब उनकी परीक्षा ली होगी।
फिर थोड़ा नमन स्वयं गुरुवर को, जिसने दु:खों की समीक्षा की होगी॥

थोड़ा सा यत्न करके तुम भी, एक बार उनका वंदन कर लो।
पाकर कृपा उस तत्त्व ज्ञानी की मिथ्यात्त्व का खंडन कर लो॥
जब भी समय मिले तुमको, मेरे कहने से मुनि दर्शन कर लो।
कुछ और यदि ना कर पाओ, उनके चरणों का चुम्बन कर लो॥

भाग्योदय तुम जानो अपना, मैं कहाँ सबल बतलाने को।
एक कदम अब तुम भी बढ़ा लो, उनके पास तक जाने को॥
मद त्याग कर चरणों में गिरना, अपने सिर पर हाथ धराने को।
शुभ मुहूर्त में वरदान मांगना, तुम उन जैसा बन जाने को॥

आर.ए.एस., उपखण्ड अधिकारी,
खानपुर (जिला झालावाड़) राजस्थान- मो.: 9414570200

भरत ऐरावत विदेह क्षेत्रस्थ कर्मभूमियाँ : एक अनुशीलन

डॉ. श्रेयांस कुमार जैन

शाश्वत लोक के जिस भाग में जीवों का निवास है, वह भूमि है। यह भूमि भोगभूमि और कर्मभूमि के रूप में शास्त्रकारों द्वारा वर्णित की गई है। जहाँ भोगों की प्रधानता रहती है वह भोगभूमि नाम से जानी जाती है और जहाँ कर्म की प्रधानता होती है, वह कर्मभूमि कही जाती है।

आचार्य पूज्यपाद कर्मभूमि के विषय में लिखते हैं-जिसमें शुभ और अशुभ कर्मों का आश्रय हो, उसे कर्मभूमि कहते हैं। यद्यपि तीनों लोक में कर्म का आश्रय है फिर भी जिससे उत्कृष्टता का ज्ञान होता है कि इसमें प्रकृष्ट रूप से कर्म का आश्रय है। सातवें नरक को प्राप्त करने वाले अशुभ कर्मों का भरतादि क्षेत्रों में ही अर्जन किया जाता है। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धि आदि विशेष स्थान को प्राप्त करने का पुण्य कर्म का उपार्जन भी यहीं पर होता है तथा पात्र दानादि के साथ कृषि आदि छः प्रकार के कर्म का आरम्भ यहीं पर होता है इसलिए भरतादि को कर्मभूमि का क्षेत्र जानना चाहिए।[1] यही तथ्य भट्टाकलंक देव ने प्रस्तुत किया है।[2]

आचार्य अपराजित सूरि कर्मभूमि के विषय में लिखते हैं-जहाँ असि-शस्त्र धारण करना, मषि-बहीखाता आदि लेखन कार्य करना, कृषि-खेती करना, पशु पालना, शिल्प कर्म करना अर्थात् हस्तकौशल के काम करना, वाणिज्य-व्यापार करना, व्यवहारिता-न्यायदान का कार्य करना, ऐसे छह कार्यों से जहाँ उपजीविका चलायी जाती है, जहाँ संयम पालन कर मनुष्य तप करने में तत्पर होते हैं, जहाँ मनुष्यों को पुण्य की विशेष प्राप्ति होती है, जिससे स्वर्ग मिलता है, जहाँ कर्म को नष्ट करने की योग्यता मिलती है, जिससे मुक्ति लाभ होता है, ऐसे स्थान को कर्मभूमि कहा जाता है।[3] भास्करनन्दि ने कर्म से अधिष्ठित भूमियों की कर्मभूमि संज्ञा मानी है।[4]

भरत, ऐरावत और विदेह में कर्मभूमि होती है क्योंकि इन्हीं क्षेत्रों से मुक्ति होती है। जैनाचार्य इसको सहेतु स्पष्ट करते हैं। मानुषोत्तर पर्वत के इस भाग में अढ़ाईद्वीप प्रमाण मनुष्य क्षेत्र है। इन अढ़ाईद्वीपों में पाँच सुमेरु हैं। एक-एक सुमेरु के साथ भरत-हैमवत् आदि सात-सात क्षेत्र हैं, तिनमें भरत, ऐरावत और विदेह ये तीन कर्म भूमियाँ हैं। इस प्रकार पाँच मेरु सम्बन्धी पन्द्रह कर्मभूमियाँ हैं। यदि पाँचों विदेहों के बत्तीस-बत्तीस क्षेत्रों की भी गणना की जाय तो पाँच भरत, पाँच ऐरावत और 160 विदेह इस प्रकार कुल 170 कर्मभूमियाँ होती हैं। विदेह की संख्या 160 किस प्रकार से है, उसी को भट्टाकलंक देव ने समझाया है कि विदेहक्षेत्र, निषध और नील पर्वतों के अन्तराल में है। इसके बहु मध्यभाग में एक सुमेरु व चार गजदन्त पर्वत हैं। इनसे रोका गया भूखण्ड उत्तरकुरु व देवकुरु कहलाते हैं। इनके पूर्व व पश्चिम में स्थित क्षेत्रों को पूर्व विदेह और पश्चिम विदेह कहते हैं। यह दोनों ही विदेह चार वक्षार गिरियों तीन-तीन विभंगानदियों और सीता व सीतोदा नाम की महानदियों द्वारा सोलह-सोलह देशों में विभाजित कर दिये गये हैं। इन्हें ही बत्तीस विदेह कहा जाता है, ये एक-एक सुमेरु सम्बन्धी बत्तीस-बत्तीस विदेह हैं। पाँच सुमेरुओं के मिलकर कुल 160 विदेह हैं।[6] इन भूमियों की कर्मभूमि संज्ञा का निर्णायक हेतु **भरतैरावत विदेहाः कर्मभूमयोन्यत्र देवकुरुत्तर कुरुभ्यः** यह तत्त्वार्थसूत्र के

तृतीय अध्याय का सैतीसवाँ सूत्र है। इससे स्पष्ट है कि भरत, ऐरावत और विदेह ये कर्मभूमियाँ हैं। इस सूत्र में अन्यत्र पद रखकर आचार्य श्री उमास्वामी ने इस शंका का निवारण कर दिया जो केवल विदेह शब्द रखने से उत्पन्न हो सकती थी। यदि अन्यत्र पद न रखते तो देवकुरु व उत्तरकुरुव भी कर्मभूमियों में परिगणित होतीं। अतः इनका निषेध करने के लिये अन्यत्र देवकुरुत्तर कुरुभ्यः ऐसा सूत्र में वाक्य कहा है।

भरत, ऐरावत और विदेह तीनों क्षेत्रों में कर्मभूमियों को बताया गया है, अतः इन क्षेत्रों के नाम और विशेषताओं पर भी विचार पहले करके कर्मभूमि के वैशिष्ट्य को भी दर्शाया जायेगा।

भरतक्षेत्र संज्ञा भरतक्षत्रिय के योग से पड़ी है। भट्टाकलंक देव लिखते हैं–विजयार्ध पर्वत[7] से दक्षिण लवण समुद्र से उत्तर और गंगा सिन्धु नदी के मध्य भाग में बारह योजन लम्बी और नव योजन चौड़ी विनीता नामक नगरी है उसमें सर्व लक्षणों से सम्पन्न भरत नाम का षट्-खण्डाधिपति चक्रवर्ती हुआ है। इस अवसर्पिणी के राज्य विभाग काल में उसने ही सर्वप्रथम इस क्षेत्र का उपभोग किया था। इसलिए उसके अनुशासन के कारण इस क्षेत्र का नाम भरतक्षेत्र पड़ा है अथवा यह भरतसंज्ञा अनादिकालीन है अथवा यह संसार अनादि होने से अहेतुक है। इसलिए भरत यह नाम अनादि सम्बन्ध पारिणामिक है अर्थात् बिना किसी कारण के स्वाभाविक है।[8]

चक्रवर्ती भरत के नाम से भरत क्षेत्र संज्ञा सार्थक प्रतीत नहीं होती। अनादिकालीन संज्ञा विषयक कथन सार्थक और युक्तियुक्त है। भरतक्षेत्र में कल्पवृक्षों के नष्ट होने पर कर्मभूमि प्रकट हुई।[9] इन्द्र ने अयोध्यापुरी के बीच में जिनमन्दिर की स्थापना की थी। इसके बाद चारों दिशाओं में भी जिनमन्दिरों की स्थापना की गई थी। अनन्तर देश, महादेश, नगर, वन, सीमा सहित गाँव और खेड़ों आदि की रचना की गई थी।[10] कर्मभूमि आने पर भरतक्षेत्र में शलाका पुरुषों की उत्पत्ति शुरु होती है जैसा आचार्य यतिवृषभ लिखते भी हैं- पुण्योदय से भरतक्षेत्र में मनुष्यों में श्रेष्ठ और सम्पूर्ण लोक में प्रसिद्ध तिरेसठ शलाका पुरुष उत्पन्न होने लगते हैं। ये शलाका पुरुष 24 तीर्थंकर, 12 चक्रवर्ती, 9 बलभद्र, 9 नारायण, 9 प्रतिनारायण और इन नामों से प्रसिद्ध हैं।[11] दिव्य पुरुष भी कर्मभूमि में ही जन्मते हैं, ये 24 तीर्थंकर इनके गुरु (तीर्थंकरों के 24 पिता और 24 माताएँ) 12 चक्रवर्ती, 9 बलभद्र, 9 नारायण, 11 रुद्र, 9 नारद, 24 कामदेव, 14 कुलकर, 9 प्रतिनारायण, सब मिलकर 169 हैं।[12] भरतक्षेत्र की कर्मभूमि की विशेषता रही है कि इसमें वंशोत्पत्ति हुई है। ऋषभदेव ने हरि, अकम्पन, कश्यप और सोमप्रभ नामक महाक्षत्रियों को बुलाकर उनको महा मण्डलेश्वर बनाया। तदनन्तर सोमप्रभ राजा, भगवान् से कुरुराज नाम पाकर कुरुवंश का शिरोमणि हुआ। हरि, भगवान् से हरिकान्त नाम पाकर हरिवंश को अलंकृत करने लगा क्योंकि वह हरि पराक्रम में इन्द्र अथवा सिंह के समान पराक्रमी था। अकम्पन भी भगवान् से श्रीधर नाम प्राप्त कर नाथवंश का नायक हुआ। कश्यप, भगवान् से मघवा नाम पाकर उग्रवंश का प्रमुख हुआ। उस समय भगवान् ने मनुष्यों को इक्षु का रस संग्रह करने का उपदेश दिया था इसलिए जगत् के लोग उन्हें इक्ष्वाकु कहने लगे।[13] सर्वप्रथम भगवान् आदिनाथ से इक्ष्वाकुवंश प्रारम्भ हुआ पीछे इसकी दो शाखाएँ हो गईं। एक सूर्यवंश दूसरी चन्द्रवंश है।[14] सूर्यवंश की शाखा भरतचक्रवर्ती के पुत्र अर्ककीर्ति से प्रारम्भ हुई

क्योंकि अर्क नाम सूर्य का है।[15] इस सूर्यवंश का नाम ही सर्वत्र इक्ष्वाकुवंश प्रचलित है। चन्द्रवंश की शाखा बाहुबली के पुत्र सोमयश से प्रारम्भ हुई।[16] इसी का नाम सोमवंश भी है क्योंकि सोम और चन्द्र एकार्थवाची हैं।

भरतक्षेत्र में कर्मभूमि के बाद ही वंश, जाति, कुल आदि परम्पराओं के उद्‌भव के साथ महापुरुष हुए जो मोक्ष के अधिकारी थे। यहाँ भगवान् ऋषभदेव ने प्रजा को असि, मषि, कृषि, विद्या, वाणिज्य, शिल्प इन छह कर्मों का उपदेश दिया है[17]। सम्पूर्ण प्रजा ने भगवान् को श्रेष्ठ जानकर राजा बनाया। राज्य पाकर भगवान् ने क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णों की स्थापना की। छह कर्मों की व्यवस्था होने से कर्मभूमि कहलाने लगी। विवाह की परिपाटी भी कर्मभूमि में प्रारम्भ हुई। भगवान् ऋषभदेव का यशस्वती और नन्दा से विवाह हुआ। मोक्षमार्ग का प्रवर्तन हुआ। कर्मभूमि में रूढ़ि से चली अपनी जाति की कन्या के साथ विवाह होने पर और उससे उत्पन्न सन्तान से ही मोक्षमार्ग चलता है जैसा कि कहा भी गया है- देव-शास्त्र-गुरु को नमस्कार कर तथा भाई बन्धुओं की साक्षी पूर्वक जिस कन्या के साथ विवाह किया जाता है, वह विवाहिता स्त्री है। विवाहिता दो प्रकार की हैं एक तो कर्मभूमि में रूढ़ि से चली आई अपनी जाति की कन्या के साथ विवाह करना और दूसरी अन्य जाति की कन्या से विवाह करना। अपनी जाति की कन्या से विवाह की गई स्त्री धर्मपत्नी। दूसरी जाति की भोग पत्नी। धर्मपत्नी के पुत्र को उत्तराधिकार मिलता है। वही मोक्ष का अधिकारी भी है।[18] कर्मभूमिज मनुष्यों में विवाह होते हैं और उनके सद् गार्हस्थ्य धर्म का पालन भी होता है। कर्मभूमि की स्त्रियों के अन्त के तीन संहनन नियम से होते हैं तथा आदि के तीन संहनन नहीं होते हैं ऐसा जिनेन्द्रदेव का कथन है।[19] हीन संहनन और राग बाहुल्य के कारण मुक्ति को प्राप्त नहीं होतीं।

कर्मभूमियों में आर्य और म्लेच्छ दोनों प्रकार के मनुष्य पाये जाते हैं। गुण अथवा गुणवानों द्वारा जो प्राप्त होते हैं, सेवित होते हैं, वे आर्य कहलाते हैं। उससे विपरीत लक्षण वाले गुणवानों से सेवित नहीं होते हैं, उन्हें म्लेच्छ कहा गया है।

आर्य दो प्रकार के होते हैं-ऋद्धि प्राप्त आर्य और ऋद्धि रहित आर्य। ऋद्धि प्राप्त आर्य सात प्रकार के हैं। बुद्धि, तप, विक्रिया, औषध, बल, रस और क्षेत्रर्द्धि ये ऋद्धियाँ हैं। इनसे सम्पन्न मुनि ऋद्धि प्राप्त आर्य कहे गये हैं। ऋद्धि रहित आर्य पाँच प्रकार के हैं-जात्यार्य, क्षेत्रार्य, कर्मार्य, दर्शनार्य और चारित्रार्य। इक्ष्वाकु आदि वंशज मनुष्य जात्यार्य हैं। आर्यक्षेत्र में उत्पन्न होने की अपेक्षा क्षेत्रार्य हैं। जिनकी कर्मक्रिया श्रेष्ठ है वे कर्मार्य हैं। सम्यक्त्व युक्त मनुष्य दर्शनार्य हैं। संयमधारी मनुष्य चारित्रार्य हैं। कर्मभूमि में रहने वाले चारित्र के माध्यम से ही ऊँचे उठते हैं। यदि और सम्पदाएँ प्रचुर मात्रा में भी हों किन्तु चारित्र नहीं हो तो **संपदो नैव सम्पदः** सम्पदाएँ वास्तव में सम्पदत्व की अधिकारिणी नहीं कही जा सकती हैं। इस प्रकार मनुष्य के भीतर उत्कर्षों का मान भी चारित्र द्वारा ही स्थापित होता है। यह सब कर्मभूमि का माहात्म्य है। यदि असत् पदार्थों का सेवन करते हैं तो नरकायु का बन्ध करते हैं।[20]

विदेहक्षेत्र निषध और नील के मध्य में स्थित है, अर्थात् निषध से उत्तर, नील पर्वत से दक्षिण और

पूर्वापर समुद्रों के मध्य में विदेहक्षेत्र की रचना है। अढ़ाईद्वीप सम्बन्धी पाँच मेरुओं के साथ पाँच भरत और पाँच ऐरावत समान ही पाँच विदेह हैं-जिनको 160 नगरियों में विभक्त कर वर्णन किया है उन सभी में भी पाँच-पाँच म्लेच्छखण्ड तथा एक-एक आर्यखण्ड स्थित हैं। सभी विदेहों के आर्यखण्डों में सदा दुषमा-सुषमा काल वर्तता है। सभी म्लेच्छखण्डों में सुषमा-दुषमा काल होता है। सभी विजयार्धों पर विद्याधरों की नगरियाँ हैं, उनमें सदैव दुषमा-सुषमा काल ही रहता है। विदेह के आर्यखण्डों में उत्कृष्ट रूप से चौदह गुणस्थान तक पाये जाते हैं और जघन्य रूप से चार गुणस्थान तक होते हैं।(21) सभी म्लेच्छों में एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही रहता है।(22) रत्नत्रय की योग्यता आर्यखण्ड में मनुष्यों में ही पायी जाती है। (23)असंयत मनुष्य पर्याप्त अपर्याप्त दोनों होते हैं।(24)विदेहक्षेत्र के सभी देशों में अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूसा, टीडी, चिड़िया, स्वचक्र (अपनी सेना) परचक्र (पर की सेना) ये सात प्रकार की ईतियाँ नहीं होती हैं। रोग मरी आदि भी नहीं होती है। कुदेव, कुलिंगी और कुमती वहाँ नहीं पाये जाते हैं। केवलज्ञानी तीर्थंकरादि शलाका पुरुषों और ऋद्धिधारी साधुओं की सदा सत्ता रहती है। तीर्थंकर अधिक से अधिक हों तो प्रत्येक देश में एक-एक ही होते हैं। कम से कम सीता और सीतोदा नदी के दक्षिण और उत्तर में एक-एक अवश्य होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक विदेह में कम से कम चार होने से पाँच विदेह के 20 अवश्य होते हैं।(25) यही कारण है कि यहाँ (विदेहक्षेत्र में) सतत् धर्मोच्छेद का अभाव है। अर्थात् धर्म की धारा अविच्छिन्न रूप से बहती है। सदा विदेही जन (अर्हन्त) होने से ही इसकी विदेह संज्ञा सार्थक है।

विदेह क्षेत्रों में मनुष्यों की आयु संख्यात वर्ष की होती है। शरीर की ऊँचाई पाँच सौ धनुष प्रमाण की होती है। वे नित्य भोजन करते हैं। उनकी उत्कृष्ट आयु एक कोटि पूर्व और जघन्य आयु अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होती है। (26) विदेहक्षेत्र में कर्मभूमि का निरन्तर प्रवर्तन रहने के कारण सुख दुःख की मिश्रित स्थिति पायी जाती है।(27) तिर्यञ्चों की भी यही स्थिति होती है।(28) यहाँ के मनुष्य और तिर्यञ्च सम्यक्त्व सहित अवस्था में देवायु का आस्रव करते हैं। मिथ्यात्व अवस्था में विपरीत कार्य करने से, खोटी क्रियाएँ करने से तिर्यञ्चायु का भी आस्रव करते हैं और सरल स्वभाव आदि से मनुष्यायु का भी आस्रव करते हैं।(29)

ऐरावत क्षत्रिय के योग से ऐरावत क्षेत्र नाम पड़ा। शिखरी पर्वत और पूर्व, पश्चिम और उत्तर तीनों समुद्रों के मध्य ऐरावत क्षेत्र है। सम्पूर्ण रचना भरतक्षेत्र के समान है किन्तु विजयार्धपर्वत और रक्ता, रक्तोदा नदी के कारण छह खण्डों में विभक्त है। आयु, शरीर की ऊँचाई आदि भरतक्षेत्र के समान है। षट्काल परिवर्तन होता है। कर्मभूमि भी समान है।

भरत, ऐरावत, विदेहक्षेत्रस्थ कर्मभूमिज अबद्धायुष्क मनुष्य ही क्षायिक सम्यग्दर्शन की प्रस्थापना व निष्ठापना कर सकता है किन्तु भोगभूमि में क्षायिक सम्यग्दर्शन की निष्ठापना हो सकती है। प्रस्थापना नहीं।[1]

अन्य अनेक विशेषताएँ हैं जो कर्मभूमि में पायी जाती हैं जैसे विकलेन्द्रिय व जलचर जीव नियम से कर्मभूमिज होते हैं। विजयार्द्ध पर्वत के निवासी मानव यद्यपि भरतक्षेत्र के मानवों के समान षट्कर्मों से ही आजीविका करते हैं परन्तु प्रज्ञप्ति आदि विद्याओं के धारण करने के कारण विद्याधर कहे जाते हैं यह उनकी विशेषता है।

भरत, ऐरावत और विदेह के अतिरिक्त स्वयंभूरमण द्वीप का आधा भाग और स्वयंभूरमण समुद्र भी कर्मभूमि के अन्तर्गत आता है। इसको विशेष रूप से इस प्रकार समझना चाहिए कि स्वयंभूरमण समुद्र के पहले स्वयंभूरमण द्वीप आता है। इस द्वीप के बहुमध्य भाग में मानुषोत्तर पर्वत के समान वलयाकृति स्वयंप्रभ नाम का पर्वत है। इसके कारण स्वयंभूरमण द्वीप के दो भाग होते हैं उसके प्रथम (उरले) भाग से लेकर उधर मानुषोत्तर है पर्वत तक भोगभूमियाँ हैं। उनमें चार गुणस्थान वाले तिर्यञ्च जीव होते हैं। पञ्चम गुणस्थान व्रतियों के ही होता है और व्रतों को कर्मभूमियाँ ही ग्रहण कर सकते हैं अन्य नहीं। कर्मभूमियाँ जीव ही इतना पाप बन्ध कर सकता जिससे उसे सप्तम नरक भी जाना पड़ता है। स्वयंभूरमण नामक अन्तिम समुद्र में होने वाले मत्स्य को मरकर सप्तम नरक मिलने का कथन संगत होता है।

भरत, ऐरावत में षट्काल परिवर्तन होने से भोगभूमि और कर्मभूमि दोनों पाई जातीं हैं। काल की स्थिरता न होने के कारण ईति-भीतियाँ होती हैं। विदेहक्षेत्र में काल की स्थिरता होने से ईति-भीति आदि नहीं होती हैं। सामान्य व्यवस्थाएँ तीनों क्षेत्रों में समान हैं। कर्मभूमि संयम और निर्वाण की साधिका होने के कारण भोगभूमि की अपेक्षा श्रेष्ठ है। यहाँ जीवों में पुरुषार्थ की विशेषता होती है वही उपादेय है।

संदर्भ :

1. सर्वार्थसिद्धि 3/ 37 पृ. 232
2. तत्त्वार्थवार्तिक भाग 1 पृ. 204-5
3. भगवती आराधना 781 विजयोदया टीका पृ. 936
4. कथं भरतादीनां पञ्चदशानां कर्मभूमित्व मिति चेत्प्रकृष्टस्य शुभाशुभ कर्मणोऽधिष्ठानत्वादिति ब्रूयः । सप्तम नरक प्रापणस्या शुभस्य कर्मणः सर्वार्थसिद्धयादि प्रापणस्य शुभस्य च कर्मणो भरतादिष्वे वोपार्जनं। कृष्यादि कर्मणः पात्रदानादियुक्तस्य तत्रैवारम्भात् । तन्निमित्तस्यात्म विशेष परिणाम विशेषस्यैतत्क्षेत्र विशेषापेक्षत्वात्कर्मणाधिष्ठिता भूमयः कर्मभूमयइति संज्ञायन्ते ॥
   तत्त्वार्थवृत्ति भास्करनन्दिकृत सुखबोधा टीका पृ. 181 ।
5. तत्त्वार्थवार्तिक 3/10/11
6. विजयार्द्ध पर्वत 50 योजन विस्तार वाला 25 योजन उत्सेध वाला है। एक कोष छह योजन जड़ भाग वाला है। पूर्व पश्चिम की तरफ से यह लवण समुद्र का स्पर्श करता है। चक्रवर्ती के विजय क्षेत्र की अर्धसीमा इस पर्वत से निर्धारित होती है। अतः इसका नाम विजयार्द्ध है। इसके नीचे तमिस्रा और खण्डप्रपात नामक दो गुफायें हैं। दोनों के दरवाजों से चक्रवर्ती विजय के लिए जाता है। इन्हीं गुफाओं के द्वारों से गंगा-सिंधु नदियाँ निकलती हैं।
7. तत्त्वार्थवार्तिक 3/
8. महापुराण 16/146
9. वही 16/151
10. तिलोयपण्णत्ती 4/5/0-11 त्रिलोकसार 803

11. तिलोयपण्णत्ती 4/1473
12. महापुराण 16/ 258-294
13. हरिवंश पुराण 13/33
14. पद्मपुराण 5/4
15. हरिवंश पुराण 13/16
16. महापुराण 16/178-179
17. लाटी संहिता 178-208
18. अंतिम तिगसंघडणं णियमेण य कम्मभूमि महिलाणं ।
अदिमतिगसंघडणं णत्थित्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥ उद्धृत प्रवचनसार 224-8
19. मधुमासंसुराहारा मानुषाः कर्मभूमि जाः। तिर्यञ्चो व्याघ्र सिंहाद्या बन्धका नारकायुषः॥ प्र.सर्ग112 हरिवंश पुराण
20. तिलोयपण्णत्ती 2936
21. वही 2937
22. भगवती आराधना 781
23. गोम्मटसार जीवकाण्ड 703
24. त्रिलोकसार 680-681
25. तत्वार्थवार्तिक 3/31 (पृ. 533 प्र.अ. अ. सुपार्श्वमतीकृत टीका)
26. तिलोयपण्णत्ती 4/2-954
27. तिलोयपण्णत्ती 5/292
28. सर्वार्थसिद्धि 6/16पृ. 334
29. गोम्मटसार कर्मकाण्ड 550

पूर्व रीडर, संस्कृत विभाग, दि. जैन कॉलेज, बड़ौत (उ.प्र.)

लोभ सभी पापों की जड़ है

-आचार्यश्री आर्जवसागर

आचार्यश्री आर्जवसागरजी ने कहा कि लोभ सभी पापों की जड़ है। लोभ के कारण ही व्यक्ति हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह आदि पापों को करता है। पुण्य से प्राप्त धन सम्पदा का उपयोग धर्म क्षेत्र के कार्यों में एवं सुपात्रों में दान करना चाहिए। दान-धर्म करने के लिए पाप एवं अनीति से धन नहीं कमाना चाहिए क्योंकि कीचड़ लपेटकर फिर स्नान करने से क्या लाभ ? न्याय-नीति से कमाया गया धन यदि थोड़ा सा दान कर दिया जाय तो उससे महान फल प्राप्त होता है। आचार्यश्री ने बताया कि वर्तमान जीवन में कर रहे पापों का फल अवश्य भोगना पड़ता है। इसलिए पापों से बचकर पुण्य कर्मों में लगना चाहिए।

साभार: आर्जववाणी

परम पूज्य आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के चातुर्मास कलश स्थापना 2016 के अवसर पर एक नई

website http://www.aarjavsagarvigyan.com

का शुभारम्भ

यह अत्यंत प्रसन्नता का अवसर है कि परम पूज्य आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के साहित्य, संघ समाचार आदि विषयों की जानकारी सभी भक्तगणों को आसान से उपलब्ध कराने के उद्देश्य से इण्टरनेट पर अहमदाबाद के पुण्यार्जक भक्त श्री विपुलभाई मेहता की कम्पनी Webline Solutions Pvt. Ltd., (Directors Shri RAMESHCHANDRA, ATULBHAI, VIPULBHAI MEHTA), 401, Arth Complex, Opp. Crosswords, Mithakhali 6 Roads, Ahmedabad, Gujarat 380009, India. www.weblineindia.com Email: info@weblineindia.com, Phone (IN): +91-79-26420897 के द्वारा वेबसाइट www.arjavsagarvigyan.com तैयार कर शुरु की गई है। इसके मीनू में निम्न विषय उपलब्ध हैं :-

1. दीक्षा और आचार्य-पद-दिवस	7. जैन-कला
2. अहिंसा-परमो धर्म/जीव-रक्षा	8. विद्वानों का अभिप्राय
3. संघ-समाचार	9. भाव-विज्ञान
4. वर्षायोग-स्थापना	10. जैन-पाठशाला
5. पर्व-समाचार	11. आगम (जैन-किताबें)
6. पिच्छिका-परिवर्तन	

उपरोक्त मीनू के अन्तर्गत विस्तृत विवरण निम्नानुसार है :-

1. **दीक्षा और आचार्य पद दिवस :** इसमें आचार्यश्री का आचार्य दिवस एवं संघ के दीक्षा आदि संबंधित जानकारी/ समाचार उपलब्ध होती है।
2. **अहिंसा परमो धर्म/ जीव रक्षा :** इसमें हिंसक, अहिंसक खाद्य व सौंदर्य प्रसाधनों की जानकारी उपलब्ध कराई जाती है।
3. **संघ-समाचार :** इसमें संघ से संबंधित जानकारी/ समाचार उपलब्ध होते हैं।
4. **वर्षायोग-स्थापना :** इसमें वर्षायोग से संबंधित जानकारी/ समाचार उपलब्ध होते हैं।
5. **पर्व-समाचार :** इसमें पर्व-संबंधित जानकारी/ समाचार उपलब्ध होते हैं।
6. **पिच्छिका-परिवर्तन :** इसमें पिच्छिका परिवर्तन कार्यक्रम से संबंधित जानकारी/ समाचार उपलब्ध होते हैं।
7. **जैन-कला :** इसमें जैन कला से संबंधित जानकारी/ समाचार उपलब्ध करवाए जाते हैं।
8. **विद्वानों का अभिप्राय :** इसमें विद्वानों के धार्मिक अभिप्राय से संबंधित जानकारी/ समाचार उपलब्ध होते हैं।

9. **भाव-विज्ञान :** इसमें नई प्रकाशित भाव विज्ञान उपलब्ध कराई जाती है।

10. **जैन-पाठशाला :** इसमें देश के विभिन्न स्थानों पर चल रही पाठशालाओं के धार्मिक विषय व कार्यक्रम आदि के समाचार एवं जानकारी उपलब्ध करवाई जाती है। धार्मिक पाठशाला हेतु **'जीवन संस्कार'** पुस्तक उपलब्ध है।

11. **आगम (जैन-किताबें) :** इसमें अभी उपलब्ध तीन पुस्तकों (1. **आर्जव वाणी**, 2. **सम्यक् ध्यान शतक** एवं 3. **जैनागम संस्कार**)को डाउनलोड कर पढ़ा जा सकता है।

उपरोक्त विषय **'आगम (जैन किताबें)'** में निम्न तरीके से जैन आगम की पुस्तकों को शुद्धिपूर्वक, श्रद्धापूर्वक, आदर सहित पढ़ने की विधि, निम्नानुसार निर्देश जारी करते हुए, बनाई गई है :-

''कृपया वेबसाईट के आगम (जैन-किताबें) को खोलते समय निम्नलिखित बिन्दुओं पर अवश्य ही ध्यान देवें :-

- क्या आप माँस (अण्डा, मछली आदि) का सेवन कर तो नहीं आए हैं?
- क्या आपने शराब का सेवन तो नहीं किया है?
- क्या आपने चमड़े के जूते/बेल्ट तो नहीं पहन रखे हैं?
- यदि आप महिला है तों क्या आप अशुद्धि (मासिक चक्र अवधि) में तो नहीं हैं?
- क्या आप वेबसाईट में वर्णित आगम के विषयान्तर्गत उपलब्ध विवरण का प्रचार-प्रसार करते समय रचयिता एवं संदर्भ का उल्लेख करेंगे?
- क्या आप सूतक/पातक में तो नहीं हैं?

नोट:- यदि उपरोक्त बिन्दुओं से आप सहमत हैं तो जूते/चप्पल छोड़कर हस्त-मुख को जल से शुद्धि कर **OK** करें और आगम के फोल्डर को श्रद्धा, विनय और आदर पूर्वक खोलें।''

उपरोक्त वेबसाइट को उपयोग करने में यदि कोई समस्या हो तो श्री विपुलभाई मेहता (Phone: 91-79-26420897 अथवा email vipul@weblineindia.com) अथवा प्रबंध सम्पादक डॉ. सुधीर कुमार जैन (Mob 9425011357, 7089111357 email: sudhirjain42@rediffmail.com) से सम्पर्क कर सकते हैं।

विशेष : भाव विज्ञान के जो भी सदस्य भाव विज्ञान पत्रिका की प्रकाशित प्रति पोस्ट के द्वारा (हार्डकापी) के स्थान पर soft copy (Digital E Bhavvigyan) चाहेंगे तो वे इस नई पर website पढ़ सकते हैं अथवा वे अपना email address प्रबंध सम्पादक डॉ. सुधीर जैन को उपरोक्तानुसार mob/email पर भेज देंगे और भाव विज्ञान की प्रकाशित प्रति (हार्ड कापी) नहीं भेजने का लेख करेंगे तो उन सदस्यों को ई भाव-विज्ञान (सॉफ्ट कापी) उनके ईमेल पर भेजी जा सकती है एवं प्रकाशित प्रति (हार्ड कापी) नहीं भेजी जावेगी।

पर्वाधिराज पर्यूषण महापर्व

पंकज जैन

जैन धर्म में व्रतों का महत्त्व सबसे अधिक होता है नियम कायदों में भी यह धर्म सबसे उच्च स्थान पर अनादिकाल से ही आसीन रहा है। मनुष्य जाति को संतुलित करने हेतु ही नियम कायदे बनाये जाते हैं, जैन धर्म में बहुत कठिन नियमों का पालन किया जाता है। यदि वास्तव में देखा जाये तो प्रत्येक जीव की रक्षा करने का सटीक विधान है, तो वह मात्र जैन धर्म में ही है। अब सवाल यह उठता है कि जैन किसे कहते हैं? जैन शब्द जिन से बना है जिसका अर्थ होता है, स्वयं को जीतने वाला और उनके उपासक ही जैन कहलाते हैं। मनुष्य को संसार की इस भयाभह दशा को जानकर जन्म-मरण के चक्र से हमेशा-हमेशा के लिए मुक्तिवधु का वरण करने की दिशा में सार्थक प्रयास करने चाहिए। मनुष्य को जिनेन्द्र भगवान की आराधना अपने जीवन मूल्यों को समझने के लिए करना चाहिए जिससे वह सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र जैसे दुर्लभ रत्नों को पहचाने ही नहीं अपितु उन्हें धारण करते हुए संसार महासागर से तर सके। जैन धर्म में दशलक्षण धर्म या पर्यूषण पर्व को पर्वधिराज माना जाता है। जैन धर्म में दशलक्षण धर्मों से सादगीपूर्ण व अहिंसावादी जीवन के लिए प्रेरित किया जाता है। यह जीवन के कल्याण के लिए होते हैं, जिन्हें जीवन में बनाये रखने के लिए तप की आवश्यकता होती है। और जैन धर्म धर्मानुसार तप का मार्ग सहज नहीं होता। तप के लिए शरीर के साथ आत्मा का शुद्ध होना आवश्यक होता है। आत्मा की शुद्धि के लिए जीवन में संयम और नियमों का होना आवश्यक है। पर्यूषण के पावन दिन इन संयम व नियमों को अपने अंदर लिए हुए होते हैं। जो मनुष्य को सम्यक्मार्ग दिखाते हैं। अर्थात् पर्वाधिराज महापर्व पर्यूषण इसमें अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पर्यूषण महापर्व को दिगम्बर मतावलंबी दशलक्षण-पर्व के नाम से महा-महोत्सव के रूप में मनाते हैं। पर्यूषण पर्व का अर्थ है हर तरह से अपने कषाय और कर्मों को उष्ण करना, तप्त करना, भस्म करना। यह पर्व विशुद्ध अध्यात्मिक पर्व है। जिसमें कषायों और कर्मों को नाश करने की विधिवत् साधना की जाती है। जैन धर्म के पालक अपने मुख्य लक्षणों को जागृत करने का प्रयास करते हैं। जैन धर्मानुसार इन दश लक्षणों का पालन करने से मनुष्य को इस संसार से मुक्ति मिल सकती है जो निम्न हैं- 1. उत्तम क्षमा 2. उत्तम मार्दव 3. उत्तम आर्जव 4. उत्तम शौच 5. उत्तम सत्य 6. उत्तम सयंम 7. उत्तम तप 8. उत्तम त्याग 9. उत्तम आकिंचन्य और 10. उत्तम ब्रह्मचर्य। यह पर्व वैसे तो वर्ष में तीन बार आते हैं। जो माघ, चैत्र, भाद्रप्रद तीनों माह के शुक्ल पक्ष की पंचमी से प्रारम्भ होकर चौदश तक चलते हैं। इनमें से भाद्र माह में आने वाले दशलक्षण पर्व को श्रद्धालुओं द्वारा विशेष पालना की जाती है। इन दिनों में श्रद्धालु अपनी कषायों को मंद कर कर्मों पर नियंत्रण रखते हुए अत्याधिक समय जिनेन्द्र भगवान की पूजा अर्चना में व्यतीत करते हैं, संयम और आत्मशुद्धि के इस पवित्र त्यौहार पर श्रद्धालु श्रद्धापूर्वक व्रत-उपवास करते हें। वैसे तो अधिकांश जैन हमेशा ही बाहर की बनी खाद्य वस्तुओं व जल का उपयोग नहीं करते परंतु पर्यूषण के दौरान जैन-व्रती और भी कठिन नियमों का पालन करते हैं। यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य यह है कि जैन धर्म में बहुत ही विस्तृत तरीके से प्रत्येक वस्तु की मर्यादा इत्यादि की जानकारी दी गई है। जैन-व्रती किसी भी प्रकार की वस्तु ग्रहण करने से पहले उसे प्रासुक रीति से शुद्ध करते हैं तभी उनका इस्तेमाल करते हैं। यह दशलक्षण महापर्व महान है ऐसे दशों धर्म उत्तरोतर आध्यात्मिक उँचाईयों की ओर ले जाते हैं और परम मुक्तिधाम में प्रवेश

कराते हैं। साक्षात् स्वर्गों के देवता भी मनुष्य की काया पाकर इन धर्मों का पालन करने को तरसते हैं। धन्य है जैन धर्म और धन्य हैं ऐसे पर्वाधिराज पर्यूषण महापर्व इन्हें बारंबार प्रणाम।

जैन धर्म एक दृष्टि

वास्तव में देखा जाये तो जैन धर्मानुसार ही भगवान महावीर के शुभ संदेश **''अहिंसा परमोधर्म व जियो और जीने दो''** को समझा व जिया जा सकता है। जैनाचार्यो ने गणित, भौतिकी, जैविकी आदि अनेकों क्षेत्रों में अनेक मौलिक प्रतिस्थापनायें की हैं। जो विज्ञानियों को अनेक सदियों बाद समझ में आईं तब जाकर विज्ञान ने स्वयं अपनी खोजों से जाना कि जैन धर्मानुसार ही जीवन जीना क्यों श्रेयकर है। जैन धर्मानुसार जैनियों को वैसे तो सभी प्रकार के जीवों की रक्षा व अहिंसा धर्म की पालना हेतु अत्यन्त कठोर नियम हैं। परन्तु आज हम जैन धर्माबलंवियों के प्रारंभिक व छोटे-छोटे नियम आपके सामने पेश करने जा रहे हैं जिससे कुछ हद तक तो यह स्पष्ट हो ही जायेगा कि अहिंसा का दम भरने वाले तथाकथित ठेकेदारों को अहिंसक जीवन की सूझ-बूझ तो दूर उन्हें अहिंसा का सही मायनों में अर्थ भी ज्ञात नहीं है। यह लोग अहिंसा को हथियार बनाकर कभी गायों के नाम पर तो कभी मानव जाति के नाम पर तो कभी धर्म के नाम पर अत्याचार करते आये हैं। ऐसे लोगों से मैं कहूँगा कि यदि वह धर्म के नाम पर तुच्छ राजनीति छोड़कर अहिंसा के सही मायनों को समझकर नि:स्वार्थ रूप से सार्थक प्रयास करें तो निश्चित रूप से वह अहिंसा प्रधान भारत की आत्मा को समझ पायेंगे।

जैन धर्म में क्यों होता है रात्रि भोजन निषेध?

क्या है रात्रि भोजन का त्याग? सूर्यास्त के पश्चात् किसी भी स्थिति में अन्न-जल इत्यादि चारों प्रकार के आहारों को ग्रहण नहीं करना ही रात्रि भोजन का त्याग कहलाता है।

क्यों होता है रात्रि भोजन का त्याग?

सूर्य की किरणों में अल्ट्रावायलेट (Ultravoilet) एवं इन्फ्रारेड (Infrared) नामक किरणें होती हैं। जिससे दिन के समय में सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति नहीं होती परन्तु सर्यास्त के बाद भोजन ग्रहण करने पर सूक्ष्म जीवों के साथ ही मच्छर इत्यादि भी जाने-अनजाने में हमारे शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। जिससे उन जीवों का घात होता है। यहाँ तक कि स्वयं की बात तो दूर अन्य किसी को खिलाना या रात्रि में भोजन तैयार करना भी मांस तैयार करना व परोसने के समान ही है। इस प्रकार यह पाप बंध कारण होने के साथ ही अहिंसा धर्म के पालन में बाधक है। अत: अहिंसा धर्म पालन करने के साथ ही आरोग्य लाभ की दृष्टि से भी रात्रि भोजन नहीं करना चाहिए। साथ ही, रात्रि में होने वाली शरीर की डिटॉक्सीफिकेशन (Detoxification) प्रक्रिया निर्वाध गति से होने के कारण मोटापा आदि रोगों से बचाव होता है।

जैन धर्म में क्यों होता है जमीकंद निषेध ?

क्या है जमीकंद? जमीन के अन्दर ही फलने वाले कंद जैसे आलू, प्याज, गाजर, मूली, शकरकंद इत्यादि जमीकंद कहलाते हैं।

क्यों होता है जमीकंद का त्याग? जमीकंद में अनन्त निगोदियाँ जीवों का निवास होने से वे तामसिक व अभक्ष

पदार्थों की श्रेणी में आते हैं। इनके सेवन से बहुस्थावर जीवों का घात होता है। यह एक प्रकार से तुच्छ फल है, जिसके सेवन से हिंसा दोष लगता है।

क्या है अनछना जल?

अर्थात् वह जल जिसे अहिंसक पद्धति से छानकर प्रासुक न किया गया हो। प्राचीन समय में जल प्राप्ति के स्त्रोत मुख्य रूप से कुए, बावड़ी इत्यादि ही हुआ करते थे परन्तु इस जल को भी मोटे दुहरे छन्ने से छान कर ही उपयोग किया जाता है और उनके जीवों को पूर्व यथास्थान छोड़ा जाता है। जिसकी जैन धर्म में एक निश्चित विधि है। जिससे जल में रहने वाले जलकायिक जीवों का घात नहीं होता, परन्तु आरओ, प्यूरेट आदि का छना जल स्वास्थ्य के लिए तो श्रेयकर हो सकता है किन्तु धर्म पालन के लिहाज से नहीं अर्थात् महाहिंसा व पाप बंध का कारण ही सिद्ध होगा क्योंकि जल में असंख्यात जलकायिक जीव पाये जाते हैं। जैन धर्मानुसार जल में असंख्यात त्रसकायिक जीव होते हैं, जैन दर्शन में पाँच स्थावर जीवों में से जल को भी स्थावर में से एक जीव माना है। जिसके कारण जल को निश्चित विधि के माध्यम से प्रासुक करने के पश्चात् ही उपयोग में लाना चाहिए जिससे हम इस महाहिंसा से बच सकें।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण: जैन धर्मानुसार जल में असंख्यात जलकायिक जीव होते हैं, वैसे आज तक विज्ञान इसे मात्र H_2O के रूप में एक रसायन मानता रहा परन्तु आधुनिक वैज्ञानिक खोजों ने इसमें जीवन की पुष्टि करते हुए जलकायिक जीवों एवं जल पर आश्रित त्रस जीवों के घात को रोकने के उपायों, मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु इनकी उपयोगिता मानी व पारम्परिक जैन विधियों से इनकी रक्षा करने की ओर ध्यान दिया है। यहाँ तक की एक खोजी ब्रिटानी युवक केप्टन स्कोर्सबी ने गंगा जल के एक बूंद जल में त्रसकाय व वनस्पति काय के कुल 36,450 जीव पाये, यह भी निश्चित रूप से जो नहीं जानते उन्हें चौकाने वाला तथ्य है कि असंख्यात नहीं तो एक बूंद जल में इतने जीव तो माइक्रोस्कोप के माध्यम से विज्ञान ने खोज ही लिए। अत: **'जिओ और जीने दो'** के सिद्धांत से अपना जीवन धर्ममय बनाकर धन्य करें और सद्‌गति को प्राप्त करें।

सम्पादक, क्राइम अगेंस्ट न्यूज, मण्डीदीप, मो.: 9425382820

मांसाहारी दवाईयों का-विकल्प-शाकाहारी दवाईयाँ

डॉ. नरेन्द्र जैन

1. प्रत्येक जैन का मौलिक अधिकार है कि चिकित्सक से कहे कि वह मांसाहारी दवा नहीं लिखें।
2. प्रत्येक जैन डाक्टर्स का नैतिक कर्त्तव्य है कि वह मांसाहारी दवाईयों का विकल्प बताकर समाज की धर्म रक्षा करें।
3. किसी भी दवा पर मांसाहारी भूरा, लाल या शाकाहारी हरा चिन्ह नहीं लग सकता मात्र खाद्य वस्तुओं पर लग सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय-भारत सरकार

ऐसी अज्ञानता एवं मजबूरी में आप मांसाहार करते हैं, करेंगे एवं करते थे।

भोपाल, सम्पर्क मो. 09329159594, 0755-2665673, 2736147

कैसे पालते हैं जैन धर्म हनुमान सिंह गुर्जर S.D.M.

पंकज जैन

आज हम आपको ऐसी शख्सियत के बारे में बताने जा रहे हैं जिसके बारे में जानकर आप दंग रह जायेंगे, हालांकि ऐसे असंख्यात उदाहरण इतिहास में मिल जायेंगे परन्तु वर्तमान में भी ऐसे हजारों नहीं वरन् लाखों व्यक्तित्त्व मौजूद हैं। फिर भी आज हम आपके समक्ष एक ऐसी ही शख्सियत का साक्षात्कार पेश करने जा रहे हैं, जिन्होंने अजैन होने के बावजूद भी जैन धर्म को समझा ही नहीं अपितु ऐसे महान व आत्म कल्याणकारी अनादि निधन धर्म को स्वीकारते हुए काफी हद तक कठिन नियमों का पालन करते हुए अपने जीवन को सफल बनाने का प्रयास किया है। ऐसे भव्य जीव हैं राजस्थान सरकार के उप जिला कलेक्टर श्री हनुमान सिंह गुर्जर, जिनसे क्राइम अगेंस्ट न्यूज की टीम ने मिलकर जाना कि कैसी है उनकी जीवन चर्या? आपकी जानकारी के लिए बतादें कि श्री गुर्जर जैनेत्तर होने के बावजूद भी मुख्य रूप से जैन धर्म का पालन करते हैं और कठिन नियमों का पालन करते हुए अनुशासित जीवन जीते हैं और आगामी भव में जैन पर्याय पाने की भावना भाते हैं।

इन महाशय ने कुछ इस अंदाज में मण्डीदीप में ससंघ विराजमान आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के चरणों में अपना नमोस्तु निवेदित किया था।''णमोकार पढ़-पढ़ कर पहले करूं नमो अरहंतों को, हाथ जोड़कर शीश झुकाऊं फिर नमो सिद्ध भगवंतों को। आचार्य नमो, उपाध्याय नमो इस क्रम से नमो अनंतों को, अंत में सबके साथ नमो सारे जगत के साधु संतों को।''

उप जिला कलेक्टर, झालावाड़, राजस्थान से विशेष साक्षात्कार

1. सर्व प्रथम मैं चाहूँगा कि आप अपना संक्षिप्त परिचय दें।

मैं हनुमान सिंह गुर्जर राजस्थान प्रशासनिक सेवा का अधिकारी हूँ। उप जिला कलेक्टर के पद पर पदस्थ हूँ। वर्तमान में मेरी पोस्टिंग खानपुर चांदखेड़ी आदिनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मुख्यालय पर है और राज्य सेवा में हूँ जाति से गुर्जर हूँ।

2. राजस्थान से यहाँ आने की कोई मुख्य वजह?

राजस्थान से आने का जो मेरा मुख्य कारण है, वो यह है कि आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज का चातुर्मास जब 2011 में रामगंजमंडी (कोटा) में हो रहा था। तब मैंने महाराजश्री की प्रेरणा से जैन धर्म स्वीकार किया और सोलहकारण व्रत जीवनभर के लिए धारण किए। साथ ही मैंने आजीवन रात्रि भोजन का त्याग, जमीकंद का त्याग किया इसके अलावा मुझे महाराजश्री की प्रेरणा से बहुत लाभ हुआ और मैं महाराजश्री के अनुशासन में रहकर ही जैन धर्म का पालन कर रहा हूँ।

3. ऐसा परम सौभाग्य सर्वप्रथम आपको कब मिला जब आप महाराजश्रीके सान्निध्य में आये?

सर्व प्रथम जब महाराजश्री का हमारे यहाँ रामगंज मण्डी में चातुर्मास के लिए पधारना हुआ उससे एक दिन पूर्व एक स्कूल में महाराजश्री ठहरे हुए थे जिसकी जानकारी मुझे मेरे ड्रायवर द्वारा मिली तब हम महाराजश्री के दर्शन करने पहुँचे जहाँ मैंने उनके पादप्रक्षालन कर उनसे प्रवचन सुनाने का आग्रह किया तब पहली बार मुझे महाराज श्री के आशीर्वाद का सौभाग्य प्राप्त हुआ। फिर मैं निरन्तर धर्मसभा में जाता रहा। एक दिन महाराजश्री ने प्रवचन के दौरान सोलहकारण व्रत के बारे में बताया तब मेरे मन में भी व्रत के भाव जागे और मैंने अपनी मंशा

महाराजश्री के समक्ष प्रस्तुत की परन्तु महाराजश्री ने मना कर दिया। परन्तु मेरे बारंबार आग्रह व मेरी तैयारी को देखते हुए उन्होंने मेरी काफी कठिन परीक्षा लेते हुए व नियमों में बांधते हुए प्रथम बार अनुमति प्रदान करते हुए कहा कि ठीक है कर के देख लो। फिर मैं धीरे-धीरे महाराजश्री से जुड़ता ही चला गया और पिछले 6 वर्षों से लगातार सोलहकारण के व्रत रखता आ रहा हूँ और काफी नियमों का पालन करते हुए धर्ममार्ग पर अग्रसर हूँ और समय-समय पर महाराजश्री के दर्शनों को आता रहता हूँ। जहाँ भी महाराजश्री होते हैं प्रतिवर्ष वहाँ जाकर आशीर्वाद प्राप्त कर सोलहकारण के व्रत करता हूँ। महाराजश्री की ही कृपा से सब कुछ धर्म-ध्यान व धर्म पालना हो रही है।

4. महाराजश्री से जुड़े आपको कितना समय हुआ?

6 वर्ष हो चुके हैं, महाराजश्री का चातुर्मास 2011 में हमारे यहाँ हुआ था तभी से मैं जुड़ा हूँ और तभी से मैं 32 दिनों के सोलहकारण व्रत के दौरान भी आता हूँ। चातुर्मास व विहार इत्यादि में समय-समय पर आता रहता हूँ। विहार की जानकारी मिलने पर तो मैं निश्चित रूप से उसमें सम्मिलित होने का प्रयास करता हूँ।

5. महाराजश्री के दर्शनों हेतु आप यहाँ आये आपको कैसा महसूस हो रहा है?

महाराजश्री के दर्शन करके मैं बहुत खुश हूँ उनके तो स्मरण मात्र से ही मुझे अति प्रसन्नता होती है। दिन-रात मैं महाराजश्री को याद करता हूँ। वैसे भी महाराजश्री का दर्शन मेरे लिए शुभ संकेत होता है। यहाँ मण्डीदीप की कमेटी वालों ने बहुत सुन्दर व्यवस्था की है। रहने की, खाने की, आने की जाने की, वैसे तो महाराजश्री जहाँ भी जाते हैं वहाँ ऐसी ही सुन्दर व्यवस्था होती है। महाराजश्री के हमारे ऊपर बहुत उपकार हैं। उन्होंने जैनों को ही नहीं बल्कि अजैनों को भी; मुझ जैसे गैर जैन पर भी कृपा वर्षायी, मुझे इतना वात्सल्य दिया, एक तरह से देखा जाए तो उन्होंने मेरा जीवन ही बदल दिया, मुझे सत्मार्ग पर चलाया ऐसे आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराजजी की बारंबार जय हो, बारंबार नमोस्तु।

6. आपके द्वारा बहुत ही सुन्दर पूजन की रचना की गई जयमाला भी लिखी गई और उसी के माध्यम से आप ने पूर्ण शुद्ध भावों से गुरुदेव की पूजन भी की इसके लेखन की प्रेरणा आपको कहाँ से मिली?

आचार्यश्री के चातुर्मास के दौरान मैंने उनकी काव्य रचनाओं से प्रेरित होकर लिखने का प्रयास किया मैंने अष्टद्रव्य पूजन की रचना की।

7. आप एक जिम्मेदार अधिकारी होने के साथ ही बहुत अच्छे कवि भी हैं। क्या आपने कविता पाठ को अपना पेशा बनाया?

जी बिल्कुल नहीं, मेरा कविता पाठ धर्म को समर्पित है। बल्कि मैं कहूँगा कि जितनी भी रचनाएं की हैं वह धर्म के प्रति मेरे भाव मात्र हैं। कभी भी धन के लिए नहीं, बल्कि धर्म वृद्धि के लिए मैंने रचनाएँ की हैं। आचार्यश्री के आशीर्वाद से मैंने अष्टद्रव्य पूजन भी लिखी है जिसमें जैन परम्पराओं की सभी संकल्पनाओं को सभी कंसेप्ट को उसमें समाहित किया गया है। सही मायनों में देखा जाय तो वह तो महाराजश्री के आशीर्वाद की ही कृपा है।

8. बहुत अच्छी बातें आपने कहीं। बहुत सुन्दर पूजन आपने लिखी, कविताएँ लिखीं और भाव-पूर्ण आप उन का पाठ भी करते हैं। यह सब क्षमताएं आपको कैसे प्राप्त हुईं ?

यह सब आचार्यश्री के सान्निध्य का ही चमत्कार मैं मानता हूँ। बार-बार महाराजश्री से शंकाएं पूछने से या जो भी

कमी हो वो पूछने पर उस गलती का प्रायश्चित्त लेने से इस तरह से जो आदमी बढ़ना चाहें बढ़ सकते हैं। यह तो ज्ञान की बहती हुई गंगा है। यदि आप इनसे पूछना चाहें, अपना कल्याण करना चाहें तो कर सकते हैं। यह हमेशा तैयार हैं, बशर्ते कोई पात्र व्यक्ति हो। मैंने गुरु महाराज का सान्निध्य प्राप्त किया, कृपा प्राप्त की, उन्होंने मुझ पर दया की और इस प्रकार मैं धर्ममार्ग में आगे बढ़ता जा रहा हूँ।

9. बड़े ही हर्ष का विषय है कि आपने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यग्चारित्र की महिमा को समझा। साथ ही, आप अपने चारित्र निर्माण करते हुए धर्म-मार्ग पर अग्रसर हैं, आगे आपकी क्या भावना हैं ?

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के सान्निध्य में रहकर उनका कृपा पात्र बनकर मैंने जो आजीवन रात्रि भोजन व जमीकंद का त्याग कर दिया है उसी के साथ पिछले 6 साल से 2 टाइम खाना और बीच में एक बार पानी ग्रहण कर रहा हूँ। सुबह उठते ही गुरु पूजन करना, भगवान की पूजन करना उसके बाद ही अपना व्यवसाय, सर्विस इत्यादि करना। घर व ऑफिस में भी एक ही कलर की ड्रेस का उपयोग करना, इस तरह से मैंने महाराजश्री की प्रेरणा व अनुशासन में रहते हुए अपनी जीवन चर्या, प्रवृत्ति व कार्यशैली को सुधारने का प्रयास किया। इसीलिए मैं बता रहा हूँ कि महाराजश्री किसी तरह का अपवाद नहीं देख सकते। उन्होंने बहुत कठिन परीक्षा करके, अनुनय-विनय करके मुझे सोलहकारण भावना व्रत प्रदान किए। फिर मैंने अनुशासन रखते हुए अपनी जीवन चर्या में काफी हद तक सुधार कर लिया।

10. क्या आपको कभी संतशिरोमणी आचार्यश्री विद्यासागरजी महामुनिराज के दर्शन करने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ है?

जी हाँ यह मेरा सौभाग्य रहा कि मैंने आर्जवसागरजी महाराज के भी गुरु आचार्यश्री विद्यासागरजी के दर्शन प्रथम बार 27 अगस्त 2016 को किए। आचार्य भगवन् के दर्शन पाकर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इससे पूर्व उनके दर्शनों का सौभाग्य मुझे नहीं मिला और मैं आज भी मानतुंगाचार्य की समाधि व तपोस्थली भोजपुर की पावन धरा पर जाकर मानतुंगाचार्य व जिनेन्द्र भगवान की वंदना करते हुए पुनः आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त करूँगा।

11. दीक्षा के सम्बन्ध में आपके क्या भाव हैं। वैसे तो कुछ कारणों से इस भव में यह संभव नहीं यदि भविष्य में आपके पुण्योदय के चलते यह अवसर प्राप्त हो, तो क्या आप दीक्षा ग्रहण करने की मंशा रखते हैं?

निश्चित रूप से मैं दीक्षा की मंशा रखता हूँ। और वास्तव में देखा जाये तो यह किसी के भी लिए दुर्लभ क्षण होंगे मेरी मंशा है कि अगले भव में मुझे जैन कुल मिले, यदि ऐसा होता है और मुझमें इतनी पात्रता आती है और अवसर प्राप्त होता है तो मैं अबिलम्ब अपने आत्म कल्याण हेतु इस पथ को स्वीकार करूँगा।

आपसे मिलकर आपके बारे में जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई वास्तव में देखा जाये तो आपने अजैन होते हुए भी जैन धर्म के मूल तत्त्व को समझा ही नहीं वरन अपने चारित्र में भी जैन धर्म को उतारने के सार्थक प्रयास किए हैं। आप निरन्तर धर्म-मार्ग पर अग्रसर रहते हुए अपनी आत्मा का कल्याण करें ऐसी हमारी भावना है। साथ ही, अपना कीमती वक्त क्राइम सम्पादक, अगेंस्ट न्यूज, मण्डीदीप को देने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। बहुत-बहुत शुभकामनाएं।

हमें आपकी जरूरत है

महिमा जैन

मैं इस साधुत्व चर्या को प्रणाम करती हूँ,
इस सादगी व्यवहार को नमस्कार करती हूँ,
मैं इतनी समर्थ नहीं कि आपने भावों को
ज्यों का त्यों लिख सकूं...
पर उनके एक अंश को लाने का प्रयास करती हूँ।

कल तक जो शब्द थे,
वो जीवन बन चुके हैं,
आपके मुख से जो निकले,
तो मोती में खिल चुके हैं,
बस जरूरत थी तो उन्हें खुद में बसाने की
आज वो शब्द,
किसी का जीवन बदल चुके हैं,

बहुत जरूरत है हमें आपकी,
आपके हो पवित्र व्यवहार की ,
जो किसी पशु को भी बदलने की
शक्ति रखता है,
आज बहुत जरूरत है हमें आपके संस्कार की

हम चलना भूल गये हैं,
सम्मान करना भूल गये हैं,
इस दूषित विचारों की सरिता में,
हम जीवन जीना भूल गये हैं,

कुछ खाना है,
तो कुछ और ही खाते हैं,
जरा सी मुसीबत में,
नियम बड़ी मुश्किल से निभाते हैं,

अपने हृदय को बदलने के लिये
हमें आपकी जरूरत है,
सही रास्ते पे चलने के लिए गुरुवर.....
हमें आपकी जरूरत है,
जमी पर रहकर,
आज भी ठोकरों से डरते हैं
शब्दों की इस हेर-फेर में,
आज भी भटकते रहते हैं हम
जब मिलता है सान्निध्य गुरुदेव का......
हँसते मुस्कुराते फिर सम्हलते हैं हम,

इन ठोकरों से बचने के लिये
हमें आपकी जरूरत है,
अंधकार रूपी इस जीवन के लिए
हमें आर्जव दीप की जरूरत है

मण्डीदीप धन्य हो गया इस रज धूल से,
पवित्र होकर ये खिल गया विद्यासागर फूल से
हमें गर्व है कि हमने इस कुल में जन्म लिया,
गुरुओं की वाणी से, इस जीवन को धन्य किया,

हमें तो निश्छल मुस्कुराहट की जरूरत है,
हमें आज भी अपनी चर्या बदलने के लिये
वो आर्जव वाणी की जरूरत है.......

अशोका गार्डन, भोपाल

अहिंसा बिलछानी (जिवाणी) यंत्र

जल छान जिवानी कीनी, सो हूँ पुनि डारि जो दीनी।
नहिं जल थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई ॥

आचार्य गुरुवर 108 श्री विद्यासागरजी महाराज के आशीर्वाद एवं 105 ऐलक श्री नि:शंकसागर जी महाराज की प्रेरणा से हमारे द्वारा अहिंसा बिलछानी (जिवाणी) यंत्र का निर्माण किया गया है। जिन जिनालयों में कुएँ की सुविधा उपलब्ध नहीं है एवं अभिषेक ट्यूबवेल बोर के जल से किया जाता है जिससे बिलछानी (जिवाणी) की समस्या बनी रहती है और अनंतानंत त्रस जीवों का घात होता है। इस बिलछानी यंत्र के उपयोग से जीवों की रक्षा होगी, मंदिरों में अभिषेक के लिए एवं आचार्य संघ, मुनिसंघ, आर्यिका संघ, त्यागी-व्रतियों की आहारचर्या हेतु शुद्ध जल की प्राप्ति होगी। श्रावक अपने प्रमाद से साधुजनों की शुद्ध जल से आहार नहीं कराते। अपने बोरिंग से जल निकाल तो लेते हैं लेकिन बिलछानी को कहीं भी डाल देते हैं इसलिए इस यंत्र के माध्यम से हमारे साधुजनों को शुद्ध आहार घरों में बोरिंग के जल से भी तैयार करवाकर शुद्ध आहारचर्या करवा सकते हैं।

विशेष:-

1. 7 इंच से अधिक बोर में अगर सिंगल फेस का सबमर्सिवल (सिंगल पाइप वाला) डाला है जो उसमें भी यह यंत्र चला जाता है और आसानी से पानी निकाला जा सकता है एवं उसी यंत्र के द्वारा वापस बिलछानी (जिवाणी) उसी स्थान पर डाली जा सकती है।
2. इस यंत्र के निर्माण में स्टील के अलावा किसी रबर या चमड़े आदि का इस्तेमाल नहीं किया गया है इसलिए यह पूर्ण रूप से शुद्ध है, अशुद्धि का दोष नहीं लगेगा।
3. पानी छानकर तो त्रस जीवों का जाने-अनजाने में घात हो जाता है, इस बिलछानी (जिवाणी) यंत्र द्वारा उसे वापस उसी स्थान पर पहुँचाया जा सकता है एवं असंख्यात जीवों के घात से बचा जा सकता है।
4. इस यंत्र के द्वारा 4, 6, 8, 10 इंच गोलाई वाले बोर में, 0 से लेकर 300 फिट तक गहराई वाले नलकूपों से रस्सी के द्वारा हाथों से खींचकर या हैण्डल के द्वारा चलाकर पानी निकाला जा सकता है एवं इसकी बिलछानी उसी गहराई पर डाली जा सकती है। इस क्रिया से असंख्य जीवों का घात नहीं होगा, पुण्य संचय होगा एवं अहिंसा धर्म का पालन होगा।

बिलछानी यंत्र हेतु सम्पर्क करें:- ऋषभ जैन (बोरवेल), 13/3, 'कुन्दन कुंज', अरिहंत विहार कॉलोनी, विदिशा (म.प्र.) मो.: 9827049864

भाव विज्ञान परिवार के आजीवन सदस्यों के लिए विशेष सूचना

''भाव विज्ञान'' पत्रिका के कच्चे माल की लागत में विगत 9 वर्षो में हुई वृद्धि के कारण पूर्व सदस्यता शुल्क रु. 1100/- को बढ़ाकर रु. 1500/- किया गया है। अतएव सभी पूर्व आजीवन सदस्यों से अनुरोध है कि अन्तर की राशि रु 400/- को **''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005** में नगद राशि सीधे जमा कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर रसीद प्राप्त करें।

विहार-समाचार

परम पूज्य आचार्य गुरुवर आर्जवसागरजी ससंघ की पंचशीलनगर के विशेष निवेदन से शंकाराचार्य नगर से विहार करके पंचशीलनगर में दिव्य जय घोष व जय-जयकारों के साथ भव्य आगवानी हुयी। करीब 8-10 दिन ठहरकर मंगल प्रवचन आदि से धर्मप्रभावना हुयी। पश्चात् शाहपुरा से होते हुए बावडियाँकलाँ में बाजे-गाजे के साथ भव्य मंगल प्रवेश हुआ। यहाँ पर गुरुवर के मंगल सान्निध्य एवं आर्शीवाद से 14, 15 एवं 16-07-2016 तारीखों में त्रिदिवसीय वेदी प्रतिष्ठा कार्यक्रम रखा गया। जिसमें पहले दिन विधान हेतु पात्र चयन किया गया और आचार्यश्री के मंगल प्रवचन आदि कार्यक्रम हुआ तथा दूसरे दिन श्री मज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक महामण्डल विधान, प्रवचन आदि हुआ। तत्पश्चात् अन्तिम दिन अभिषेक, पूजन के पश्चात् मंगल दिव्य श्रीजी की शोभा यात्रा बाजे के साथ अपार जन समूह के बीच प्रतिमाओं को मन्दिर जी में वेदी पर विराजमान किया गया। आचार्यश्री के मंगल प्रवचन आदि कार्यक्रम भी हुये। इस प्रकार यह कार्यक्रम मंगलमय सानन्द सम्पन्न हुआ।

परम पूज्य आचार्य गुरुवर आर्जवसागरजी महाराज का ससंघ विहार 16.07.16 दोपहर को बावडियाकलाँ से मंडीदीप समाज के निवेदन से उस दिशा की ओर विहार किया और शाम को 5:30 बजे मंडीदीप में धर्मध्वजा व बाजे एवं विशाल जन समूह के साथ मंगल प्रवेश हुआ। संघस्थ 105 श्री प्रतिभामति एवं 105 राजितमति आर्यिकाओं ने मेन रोड में मंगल आगवानी की। घर-घर के सामने गुरुवर का पादप्रक्षालन किया गया। जय-जयकार के साथ मन्दिर तक पहुँचे, मन्दिर का दर्शन कर संतनिवास पहुँचे। वहाँ पर मंगल उद्‌बोधन दिया। मण्डीदीप कमेटी के द्वारा चातुर्मास हेतु श्रीफल भेंट किया गया। पश्चात् 19 तारीख को गुरुवर का पादप्रक्षालन, शास्त्र भेंट, विशेष पूजन आदि से गुरुपूर्णिमा मनाई गई और गुरुवर ने अपने मंगल प्रवचन में गौतम को महावीर से गुरु कैसे मिले ? इसके बारे में बताया। दूसरे दिन वीरशासन जयन्ती के दिन कैसे 66 दिन के बाद वाणी खिरि इसके बारे में कहा।

पश्चात् 24.07.16 तारीख को मेन बाजार के निकट विशाल पण्डाल में चातुर्मास प्रतिष्ठापन मंगलकलश स्थापना का कार्यक्रम मंगलमय सम्पन्न हुआ। जिसमें पहले श्रावकगण गुरु संघ को एवं मंगल कलशों को लेकर बाजे के साथ कार्यक्रम स्थल पर पहुँचे। सर्वप्रथम चन्दन वाला कन्या मण्डल, अशोकागार्डन, भोपाल द्वारा मंगलाचरण किया गया। इस कार्यक्रम का संचालन डॉ. नरेन्द्र जैन, भोपाल वालों ने किया था। पश्चात् सूरत से पधारे अतिथियों द्वारा चित्र अनावरण तथा सूरत, अहमदाबाद, दमोह, सागर और भोपाल से पधारे अतिथियों द्वारा द्वीप प्रज्ज्वलन किया गया। पश्चात् मण्डीदीप की कन्याओं द्वारा मंगलाचरण हुआ। पश्चात् बाहर से पधारे अतिथियों को कमेटी की ओर से सम्मानित किया गया। मण्डीदीप की पाठशाला के बच्चों ने धार्मिक प्रस्तुति दी। तदुपरान्त कलशस्थापना की बोलियाँ शुरु हुई। जिसमें प्रथम रत्नत्रय कलश का सौभाग्य श्री दिलीप-रेनू पहाड़िया जैन को, दूसरा अतिथिसत्कार कलश का सौभाग्य श्री प्रेमचंद-शान्ति जैन भोपाल को, तीसरा वात्सल्य कलश का सौभाग्य श्री आजाद-अनिता जैन को, चौथा धर्मप्रभावना कलश का सौभाग्य श्री छगनलाल-चमेली जैन को, पंचम सौभाग्य कलश का भाग्य अर्पित मेघा जैन को प्राप्त हुआ। पश्चात् पादप्रक्षालन का सौभाग्य पटेल नगर वालों को व पूजन का सौभाग्य श्रीमती अंकुरी बाई परिवार मण्डीदीप वालों को और आरती का

सौभाग्य श्री अरविंद जैन आदि सूरतवालों को और शास्त्र भेंट का सौभाग्य राजीव-मनोज कुमार जैन पटेल नगर वालों ने प्राप्त किया। पश्चात् मण्डीदीप समाज द्वारा चातुर्मास हेतु निवेदन पूर्वक श्रीफल भेंट किये गये। तदुपरान्त भाव विज्ञान पत्रिका के नवीन अंक का विमोचन किया गया। पश्चात् गुरुवर की संगीतमय पूजन एवं आरती हुई। तत्पश्चात् गुरुवर का मंगल प्रवचन अहिंसा एवं चातुर्मास के महत्त्व के संदर्भ में सम्पन्न हुआ। पश्चात् पाँचों कलश कार्यक्रम स्थल से संत-निवास तक जय-जयकारों के साथ लाये गये। तदुपरान्त मंत्र उच्चारण के साथ शुभ मुहूर्त में कलशों की स्थापना की गयी। इस कार्यक्रम में भारत के अनेक प्रदेशों जैसे भोपाल, दमोह, सागर, अहमदाबाद, तमिलनाडु, सूरत, राजस्थान आदि स्थानों से पधारकर लोगों ने इस कार्यक्रम को भव्य रूप प्रदान किया। इस प्रकार यह चातुर्मास कार्यक्रम मंगलमय सानंद सम्पन्न हुआ।

तदुपरान्त 9 अगस्त 2016 को भगवान् पार्श्वनाथ का मोक्षकल्याणक दिवस बड़ी भक्ति पूर्वक मनाया गया। जिसमें संतनिवास में सम्मेदशिखरजी की रचना कराकर उसके बीच सांवलिया पार्श्वनाथ विराजमान किया। पश्चात् अभिषेक, पूजन के साथ निर्वाण लाडु विशेष व्यक्ति को चुनकर निर्वाणकाण्ड पढ़ते हुए भक्तिभाव के साथ लाडु चढ़ाया गया। इसी बीच भ. पार्श्वनाथ के जीवनदर्शन पर गुरुवर का प्रवचन भी सम्पन्न हुआ और मन्दिरों में भी दोनों वेदियों में भी लाडु चढ़ाये गये। पश्चात् आचार्यश्री की मंगलप्रेरणा से 17 अगस्त 2016 से सामूहिक सोलहकारण व्रत महोत्सव प्रारम्भ हुआ। जिसमें श्री प्रदीप जैन, बीना के निर्देशन में जिनाभिषेक, शांन्तिधारा के उपरान्त व्रत संकल्प का कार्यक्रम श्री विनोद कुमार वकील साहब द्वारा मंगलकलश स्थापना पूर्वक किया गया। पश्चात् आचार्यश्री का आशीर्वाद एवं प्रवचन हुआ। इस सोलहकारण व्रत में बाल, युवा, वृद्ध सब मिला करके करीब 80-85 लोगों ने इस व्रत में भाग लिया। प्रतिदिन संगीतमय सामूहिक पूजन की गयी और गुरुवर का प्रवचन तीर्थोदयकाव्य को समझाते हुए सोलह भावना पर प्रारम्भ हुए और 18 अगस्त को रक्षाबन्धन पर्व एवं श्री श्रेयांसनाथ भगवान का मोक्षकल्याणक दिवस मनाया गया। सभी ने विष्णुकुमार मुनि एवं अकम्पनाचार्यदि 700 मुनियों की पूजन की और सबने रक्षासूत्र बांधा और श्री श्रेयांसनाथ भगवान की पूजन के साथ निर्वाण लाडु भी चढ़ाया गया। पश्चात् गुरुवर का प्रवचन रक्षा बन्धन पर्व पर हुआ तथा 3 सितम्बर 2016 को चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शान्तिसागरजी महाराज की पुण्यतिथि मनाई गई। जिसमें उनका चित्र अनावरण एवं पूजन, आरती आदि कार्यक्रम हुये और कुछ व्यक्तियों ने श्री आ. शान्तिसागरजी के जीवन परिचय दिया और अन्तिम में गुरुवर आर्जवसागरजी ने भी चा.च. आ.श्री शान्तिसागरजी का कई संस्मरण सुनाये थे।

पश्चात् 6 सितम्बर 2016 से 'पर्यूषण महापर्व' श्रावक साधना का विशेष कार्यक्रम विशाल पण्डाल में मनाया गया। दशलक्षण कलश की स्थापना श्री कमल जैन, खिमलासा वालों के द्वारा की गई। जिसमें प्रातःकाल से जिनाभिषेक, शान्तिधारा एवं संगीतमय पूजन, दशलक्षण विधान एवं पर्व धर्म पर विशेष प्रवचन तथा दोपहर में तत्त्वार्थ सूत्र का वाचन एवं प्रवचन व शाम को धर्म भावना शतक का पाठ, आरती, विद्वान् द्वारा शास्त्रसभा एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि सम्पन्न हुये। पश्चात् 17 सितम्बर को षोडसकारण महामण्डल विधान एवं व्रतियों का सम्मान समारोह व सामूहिक क्षमावाणी पर्व मनाया गया और 18 सितम्बर को विशाल रूप से गाजे-बाजे के साथ विशाल जन समूह के बीच श्रीजी की भव्य शोभायात्रा (विमानोत्सव) सम्पन्न हुआ। अन्त में आचार्य गुरुवर का मंगल प्रवचन सम्पन्न हुआ।

भाव विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

नियमावली :

1. उत्तर लिखने वाले या उसके पारिवारिक सदस्य की भाव विज्ञान पत्रिका संबंधी आजीवन सदस्यता होनी अनिवार्य है। एक परिवार से एक ही उत्तर पुस्तिका स्वीकार्य होगी । अन्य नहीं।
2. प्रश्न पत्र के पेपर पर ही उत्तर लिखकर भेजें । फोटो कॉपी मान्य नहीं होगी।
3. उत्तर पुस्तिका पर अंक देने का भाव उत्तर पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता, लिखावट एवं उम्र पर निर्भर करेगा। अल्प उम्र वाले प्रतियोगी को प्रमुखता दी जावेगी।
4. उत्तर लिखकर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।
5. उत्तर पुस्तिका की प्रतियोगी को एक फोटोकॉपी करवा लेना चाहिये क्योंकि मुख्य उत्तर पुस्तिका में कोई गलती न हो एवं अगली भाव विज्ञान पत्रिका में आने वाले उत्तरों का प्रतियोगी मिलान कर सके।
6. पत्रिका पहुँचने के पन्द्रह दिनों के भीतर उत्तर अवश्य प्रेषित करें। पत्रिका प्रकाशित होने के एक माह के बाद प्राप्त उत्तर पुस्तिकाएँ प्रतियोगिता हेतु मान्य नहीं की जावेगी।
7. पुरस्कार की राशि मनीआर्डर या बैंक आदि से भेजी जावेगी। प्रतियोगी प्राप्त मूल्य का उपयोग अपने तीर्थ वंदना, पूजा द्रव्य दान, आहार दान, औषधदान, उपकरण दान, पाठशाला की यूनिफार्म आदि धर्म कार्य के द्रव्य में सम्मिलित कर सकते हैं।
8. अगली भाव विज्ञान पत्रिका में सभी श्रेणियों के पुरस्कार विजेताओं के नाम प्रकाशित किये जावेंगे।
9. उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित की जानी चाहिए।
   डॉ. प्रोफेसर सुधीर जैन, 85, डी.के. कॉटेज, दानापानी रेस्टोरेंट के पास, ई-8 एक्सटेंशन, भोपाल (म.प्र.)

* **उपरोक्त प्रतियोगिता के बारे में हमारा उद्देश्य है कि बाल-युवा पीढ़ी भी स्वाध्याय के क्षेत्र में आगे बढ़े एवं घर-घर में चले धर्म संस्कार की पाठशाला।**
प्रथम पुरस्कार : 108 योग्य संख्यक मूल्य, द्वितीय पुरस्कार: 72 योग्य संख्यक मूल्य
तृतीय पुरस्कार : 57 योग्य संख्यक मूल्य

पुरस्कारों के पुण्यार्जक श्री विनोद कुमार जैन, 591, कंचन विला, कृष्ण विहार, वी.के. कोल नगर, (अजमेर राजस्थान)

उत्तीर्ण प्रतियोगी परिचय

जून 2016

प्रथम श्रेणी

श्रीमती कमला केसरीचंद जैन
शासकीय नर्सरी, नूतन नगर, खरगोन

द्वितीय श्रेणी

श्रीमती संगीता प्रदीप कुमार जैन
टी-2, अमर रेसीडेंसी, 43,
लाजपतराय कॉलोनी,
अशोका गार्डन, भोपाल

तृतीय श्रेणी

श्रीमती सरोज संतोष कुमार जैन
पपौरा चौराहा, टीकमगढ़ (म.प्र.)

उत्तर पुस्तिका जून 2016

1. सोलहकारण	2. 12वें स्वर्ग से	3. कापिल्य नगरी में
4. जयश्यामा	5. ना	6. हाँ
7. ना	8. हाँ	9. देवों
10. मंदरजी	11. सुवीर	

12. भ. विमलनाथ तीर्थंकर दीक्षा के समय नमः सिद्धेभ्यः कहकर दीक्षा लेते हैं एवं दीक्षाकाल से वे बोलते नहीं हैं केवलज्ञान होने तक मौन रहते हैं।

13. जेष्ठ कृष्णा	14. माघ शुक्ला 4	15. माघ शुक्ला 6
16. आषाढ़ कृष्णा 8	17. सही	18. गलत
19. गलत	20. सही	

भाव विज्ञान जैन धर्म प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

समय : 15 दिन, अंक : 100

- 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं।
- इन प्रश्नों में से एक प्रश्न का उत्तर दो लाइनों में वाक्य सहित लिखना अनिवार्य है।
- उत्तर राष्ट्रभाषा हिन्दी में लिखें। लिखकर काटे या मिटाए जाने पर अंक नहीं दिए जाएँगे।

सही उत्तर पर (✓) सही का निशान लगावें-

प्र.1. भ.अनन्तनाथ के पिताजी का नाम क्या था?

भानुराजा ( ) सिंहसेन ( ) सूरसेन ( )

प्र.2. भ. अनन्तनाथ का जन्म किस वंश में हुआ था?

इक्ष्वाकुवंश ( ) यादववंश ( ) नाथवंश ( )

प्र.3. भ. अनन्तनाथ के समवसरण का विस्तार कितना था?

7 योजन ( ) 6 योजन ( ) $5\frac{1}{2}$ योजन ( )

प्र.4. भ. अनन्तनाथ की आयु कितनी थी?

1 लाख वर्ष ( ) 30 लाख वर्ष ( ) 10 लाख वर्ष ( )

हाँ या ना में उत्तर दीजिये-

प्र.5. तीर्थंकरों को केवलज्ञान होने के बाद पुन: संसार में लौटकर आते हैं। ( )

प्र.6. जो अघातियाँ कर्मों को नष्ट कर देते हैं वे अरिहंत कहलाते हैं। ( )

प्र.7. समवसरण में तीर्थंकरों की वाणी तीनों संध्या काल में खिरती है। ( )

प्र.8. सौधर्मइन्द्र की आज्ञा से कुबेर तीर्थंकरों के समवसरण की रचना करता है। ( )

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:-

प्र.9. भ. अनन्तनाथ ने अपने .... काल बीत जाने पर दीक्षा ली थी।

(3 लाख वर्ष, सात लाख वर्ष, 15 लाख वर्ष)

प्र.10. भ. अनन्तनाथ के साथ .... राजाओं ने दीक्षा ली।

(तीन हजार, एक हजार, पांच हजार)

प्र.11. भ. अनन्तनाथ ने अपने .... पुत्र को राज्यभार सौंपा था।

(चण्डशासन, अनन्तविजय, वसुषेण)

दो पंक्तियों में उत्तर दें:-

प्र.12. समवसरण से भगवान के मंगल विहार के समय कौन, कितने, कैसी कमलों की रचना करते हैं?

....

....

....

सही जोड़ी मिलायें:-

प्र.13. भ. अनन्तनाथ की दीक्षा पालकी का नाम - श्री जय

प्र.14. भ. अनन्तनाथ के प्रथम दाता का नाम - सर्वश्री

प्र.15. भ. अनन्तनाथ के समवसरण में प्रमुख आर्यिका का नाम - विशाख

प्र.16. भ. अनन्तनाथ के समवसरण में प्रमुख गणधर का नाम - सागरदत्त

सही (✓) या गलत (×) का चिन्ह बनाइये:-

प्र.17. भ.अनन्तनाथ को पीपल वृक्ष के नीचे केवलज्ञान हुआ था। ( )

प्र.18. भ. अनन्तनाथ के समवसरण में कुल चौंसठ हजार मुनि थे। ( )

प्र.19. भ. अनन्तनाथ ने चैत्र कृष्ण चतुर्दशी के दिन मोक्ष पद पाया। ( )

प्र.20. भ. अनन्तनाथ के समय सुप्रभ बलभद्र, पुरुषोत्तम नामक नारायण हुआ। ( )

आधार

1. उत्तर पुराण, 2. जैनागम संस्कार

प्रतियोगी-परिचय

भाव विज्ञान सदस्यता की रसीद क्रमांक :

नाम .... उम्र ....

पिता/माता/पति का नाम ....

नगर या गाँव का नाम ....

पता...

....

मोबाईल/फोन नं. ....

सदस्यों को भाव विज्ञान प्रेषित करते समय लिफाफे के पते पर रसीद क्रमांक का लेख भी किया जाता है।

भाव विज्ञान परिवार

✶✶✶✶✶ शिरोमणी संरक्षक ✶✶✶✶✶

मेसर्स आर.के. ग्रुप, मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर, ● श्री जैन निर्मल कुमार झांझरी, डीमापुर (नागालैंड)

✶✶✶✶ परम संरक्षक ✶✶✶✶

● श्री जैन गौतम काला, राँची ● श्री बुधराज जैन कासलीवाल, पांडीचेरी

✶✶✶ पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक ✶✶✶

● प्रबंधकारिणी समिति, श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, कीर्तिनगर, जयपुर ● सकल दिगम्बर जैन समाज, दाँतारामगढ़, जिला सीकर ● श्री कुन्थीलाल रमेशचंद नरेश कुमार जैन गदिया, नसीराबाद (अजमेर) ● **रामगंजमण्डी :** सकल दिगम्बर जैन समाज एवं वर्षायोग समिति 2011, श्री जैन ताराचंद मित्तल परिवार एवं महेशकुमार अशोक कुमार महेन्द्र कुमार जैन ठोरा।

✶✶ पुण्यार्जक संरक्षक ✶✶

● श्री जैन नीरज सुपुत्र श्रीमती चन्द्रकला पाटनी, रांची ● सुशील कुमार, अभिषेक रोहित कुमार जैन, पांडीचेरी ● श्री मिट्ठनलाल जैन, नई दिल्ली

✶ सम्मानीय संरक्षक ✶

● श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, गोवा ● श्री जैन पदमराज होळल, दावणगेरे ● श्री जैन सोहनलाल कासलीवाल, सेलम ● श्री जैन संजय सोगानी, राँची ● श्री जैन आकाश टोंग्या, भोपाल ● श्री महावीरप्रसाद संजयकुमार जैन, इस्पात एंटरप्राईजेस प्रा.लि., कलकत्ता ● श्रीमती जैन संगीता हरीश बजाज, टीकमगढ़ ● श्रीमती कमलाबाई अशोक जैन साहबजाज, अजमेर ● श्री जैन बी.एल. पचन्ना, बैंग्लुरू ● श्री घनश्याम जैन, कृष्णा नगर, दिल्ली ● **जयपुर :** श्री जैन कमलजी काला, कु. इन्द्रसेना जैन, ● **सूरत :** श्री नरेश जैन, (दिल्ली वाले), श्री जैन निलेशभाई शाह।

✶ संरक्षक ✶

● श्री जैन विजय अजमेरा, रीवा ● श्री के. सी. जैन, डि. एक्साइज अधिकारी, छतरपुर ● श्री अजित प्रसाद जैन सराफ, रेवाड़ी ● **दिल्ली :** श्री विजयपाल जैन, शाहदरा, श्री राकेश जैन, रोहिणी ● श्री दिगम्बर जैन तीर्थ बड़ा मंदिर, हस्तिनापुर (मेरठ) ● श्री संजय जैन, गुड़गांव ● श्रीमती सुषमा रवीन्द्र कुमार जैन, गाजियाबाद ● श्री जैन कल्याणमल झांझरी, कलकत्ता ● **भोपालः** श्रीमती सुधा महेन्द्र कुमार जैन, श्री प्रेमचंद जैन ● श्री कस्तूरचंद सुरेश कुमार जैन, रामगंज मण्डी, कोटा ● श्रीमती जैन हीरामणी चांदमल सेठी, गुवाहाटी ● श्री जैन विमलचंद मोहित कुमार ठोलिया, पांडीचेरी ● श्रीमति विमला मनोहर जैन, सूरत ● **जयपुर :** श्री एस.एल. जैन (बागड़िया), श्री जैन गुणसागर ठोलिया-किशनगढ़-रेनवाल, श्री जैन श्रेयांस कुमार पाटोदी, श्रीमती जैन अनिता पारस सौगानी, श्री जैन जितेन्द्र अजमेरा, श्री जैन ओम कासलीवाल, श्री जैन मंगलचंद हरकचंद मोतीलाल कमलचंद छाबड़ा, श्री विजय कुमार जैन छाबड़ा ● **उदयपुर :** श्री प्रकाशचंद जैन, श्रीमती निधी राहुल जैन-अनुपम ग्रुप ऑफ कम्पनीज, श्री जैन अशोक कुमार ड्वारा ● **इंदौर :** श्री सचिन जैन, स्मृति नगर

✶ विशेष सदस्य ✶

● **अजमेर :** श्री भागचन्द जैन, नसीराबाद ● **सूरत :** श्री जैन हर्षद भाई मेहता, श्री जैन अरविंद भाई गांधी, श्री जैन संयम संदीप भाई शाह, श्री जैन रमेश मोहनलाल दौसी, श्री जैन कोठारी बाबूलाल कचरालाल, श्री जैन कन्हैयालाल कचरालाल मेहता, श्री जैन कमलेश शाह, श्री जैन हसमुख मगनलाल शाह, श्री जैन चम्पालाल लक्ष्मीलाल सिंघवी, श्री जैन नीलकेष बालू शाह मढ़ी, श्रीमती जैन सुनिता विद्या प्रकाश दीवान, श्री जैन अशोक कुमार गंगवाल खाच्छरियावास, श्रीमती जैन गुणमाला देवी दीपचंद सेठी ● **भोपालः** श्री राजकुमार जैन

✶ नवागत सदस्य ✶

• **भोपालः** श्री राजकुमार जैन सूर्या, श्री प्रमोद जैन हिमांशु, सतीशचंद जैन, श्री जैन धर्मचंद बाझल्य, श्री गौरव जैन • **मण्डीदीप रायसेनः** श्री मनोजकुमार जैन, श्री प्रेमचंद जैन, श्री राजेश जैन, सुश्री सौम्या संजय जैन, श्री संजय मुन्नालाल जैन, श्री कमलकुमार जैन, श्री अभिनेष कमलेशकुमार जैन, श्री पारूल जैन, श्रीमती चमेलीबाई जैन, श्री नवीन कुमार जैन

भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन-पत्र

मैं .... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला पिता/पति श्री ....
जिला .... प्रदेश ....से **भाव विज्ञान पत्रिका** पुर्ण्याजक विशेषांक संरक्षक सदस्य रूपये 24500/- ☐ परम संरक्षक रुपये 21000/- ☐ पुण्यार्जक संरक्षक सदस्य रुपये 18,000/- ☐ सम्मानीय संरक्षक सदस्य रुपये 11,000/- ☐ संरक्षक सदस्य रुपये 5,100/- ☐ विशेष सदस्य रुपये 3,100/- ☐ आजीवन (स्थायी) सदस्यता रुपये 1,500/- ☐ राशि देकर आजीवन सदस्यता स्वीकार करता/ करती हूँ।

मेरा वर्तमान व्यवहारिक का पता :- ....
....

जिला .... प्रदेश ....

पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....

फोन नम्बर .... मोबाईल ....

ई-मेल .... है।

दिनांक : हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री .... को शिरोमणी संरक्षक/पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक/परम संरक्षक/पुण्यार्जक संरक्षक/सम्मानीय संरक्षक/संरक्षक/विशेष सदस्य/आजीवन सदस्यता क्रमांक ....प्रदान की जाती है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

आशीर्वाद एवं प्रेरणा : संत शिरोमणी आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से दीक्षित आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज

पत्रिका की विशेषताएं एवं उद्देश्य :

- ☛ विशिष्ट साधक आचार्यों या साधुओं के और डाक्ट्रेट व विशिष्ट विद्वानों के शिक्षाप्रद आलेखों, प्रवचनों एवं समीक्षाओं का प्रस्तुतिकरण
- ☛ सत् साहित्य समीक्षा। ☛ अहिंसात्मक जीवन शैली। ☛ व्यसन मुक्ति अभियान ।
- ☛ हिंसक पदार्थों व हिंसक सौंदर्य प्रसाधन का निरसन।
- ☛ नई पीढ़ी के लिए वैज्ञानिक शैली में जैन दर्शन का प्रस्तुतिकरण।
- ☛ रूढ़िवाद, मिथ्यात्व व शिथिलाचार रहित अनेकान्त, स्याद्वाद और सापेक्षवाद शैली में जैनत्व का प्रस्तुतिकरण।
- ☛ धार्मिक प्रश्नोत्तरी व काव्य संग्रह की प्रस्तुति।
- ☛ धार्मिक पर्व आयोजन व मुनि संघ समाचार प्रस्तुति इत्यादि। ☛ प्रतिभा सम्पन्न प्रतियोगियों के लिए सम्मानित करना।

नोट : **''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005 में नगद राशि सीधे जमा कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर सदस्यता शुल्क की रसीद प्राप्त की जा सकती है।**

सदस्यता आवेदन पत्र भेजन का पता

''भाव विज्ञान'' एम-8/4, गीतांजली काम्पलैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 (म.प्र.) को प्रषित करें।
सम्पर्क : डॉ. अजित कुमार जैन - 09425601161, डॉ. सुधीर जैन - 09425011357

कृपया पत्रिका को पढ़कर अपने परिजन को दें या किसी दि. जैन मंदिर, वाचनालय अथवा किसी दि. जैन धर्म क्षेत्र पर विराजमान कर दें।

कृपया यहाँ से निकालें

रजि. क्रं. MPHIN/2007/27127

परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री 108 विद्यासागरजी महाराज ससंघ, भोपाल चातुर्मास-2016

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - श्रीपाल जैन 'दिवा' एल-75, केशर कुंज, हर्षवर्धन नगर, भोपाल-3 (म.प्र.)